शोध पत्रों को प्रकाशित करने के लिए विधि मान्य आई.एस.एस.एन 2321–9645

कल, आज और कल भी बहुपयोगी

विश्व स्नेह समाज

वर्ष 20, अंक 11, अगस्त 2021

हिन्दी मासिक, एक रचनात्मक क्रांति

मूल्य :
15 रुपये

चतुर्थ काव्य सम्राट प्रतियोगिता

पुरस्कार राशि 11000/रुपये मात्र

इस प्रतियोगिता में उम्र का कोई बंधन नहीं है. देश-विदेश का कोई भी रचनाकार इसमें प्रतिभाग कर सकता है. दिए गए विषय पर आपको अपनी एच रचना पठनीय हस्तलिपि अथवा टंकित कराकर भेजनी होगी। रचना के साथ अपना पूरा नाम, पता, एक फोटो, ह्वाट्सएप नंबर अगर ई-मेल हो ईमेल आईडी भेजना होगा। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि रचना वाचन में अधिकतम पांच मिनट की हो.

नियम एवं शर्तेः

1. रचना मौलिक होनी चाहिए. इसके लिए मौलिकता का प्रमाण देना आवष्यक होगा। किसी भी स्तर पर मौलिकता में कमी सिद्ध होने पर प्रतिभागिता रद्द कर दी जाएगी।
2. प्रतियोगिता तीन चरणों में होगी. प्रत्येक चरण के विजयी प्रतिभागियों को ह्वाट्स समूह, ई-मेल के माध्यम से जानकारी दी जाएगी.
3. प्रथम चरण के विजयी प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका एक वर्ष की सदस्यता तथा एक सौ रुपये मूल्य की पुस्तकें निःशुल्क दी जाएगी।
4. द्वितीय चरण के लिए केवल 15 रचनाकारों का चयन किया जाएगा. द्वितीय चरण के विजयी प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका दो वर्ष की सदस्यता तथा दो सौ रुपये की पुस्तकें निःशुल्क दी जाएगी।
5. तृतीय एवं अंतिम चरण के लिए 11 रचनाकारों का चयन किया जाएगा. तृतीय चरण में पहुंचने वाले प्रतिभागियों को स्वयं उपस्थित होकर काव्य पाठ करना होगा। प्रथम स्थान पाने वाले प्रतिभागी को 11000/रुपये नगद एवं काव्य सम्राट की उपाधि, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वालों को स्मृति चिन्ह और प्रमाण पत्र तथा शेष 08 प्रतिभागियों को प्रशस्ति पत्र प्रदान किया जाएगा। तृतीय चरण के समस्त प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका पंचवर्षीय सदस्यता तथा तीन सौ रुपये मूल्य की पुस्तकें निःशुल्क दी जाएगी।
6. प्रतिभागियों को मांगे गये विवरण के साथ रुपये पांच सौ का चेक/डीडी/आरटीजीएस/नेफ्ट/आन लाईन अथवा सीधे संस्थान के खाते में जमा कर जमा रसीद की प्रति भेजना अनिवार्य होगा।

खाता धारक का नामः **‘सचिव विष्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद’**
बैंक का नाम : **युनियन बैंक ऑफ इंडिया** शाखा : **प्रीतम नगर, इलाहाबाद**
खाता संख्याः **538702010009259** आई.एफ.एस. कोडः **यूबीआईएन 0553875**

विषय : भ्रष्टाचार

आवेदन की अंतिम तिथि 15 दिसम्बर 2021

सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान
एलआईजी—93, नीम सराय कॉलोनी, प्रयागराज-211011, ह्वाटसएप नं०: 9335155949,
sahityaseva@rediffmail.com, hindiseva15@gmail.com

कल, आज और कल भी बहुपयोगी

विश्व स्नेह समाज

मासिक, वर्ष:20, अंक: 11
अगस्त : 2021

इस अंक में......

हिन्दी के योद्धा : राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन:.. 05

प्रकृति सौन्दर्य के साधक महाकवि कालिदास 09

आधुनिक काव्य की बढ़ती गद्यात्मकता 15

स्थायी स्तम्भ

अपनी बातः गुरु की महिमा 04

शोध : आदर्श समाज की स्थापना करती. 11

स्वतंत्रता है लोकतंत्र 19

अध्यात्म : धर्म, पंथ एवं सम्प्रदाय 21

स्त्री के सन्दर्भ में धर्म की नई व्याख्या हो 23

संस्कार और भारतीय संस्कृति 38

कविताए/गीत/ग़ज़ल:

रघुवंशमणि दूबे, कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव, विजय कुमार सम्मपत्ति 28, 30, 32

कहानी:

बिखरे मोती, देवी, रोमन का प्रश्न 24, 29

साहित्य समाचार, ...10, 40

लघु कथाएं:

जे0बी0नागरत्नमा, हरिहर चौधरी 33,34

मुख्य संरक्षक
श्री बुद्धिसेन शर्मा
संरक्षक सदस्य
श्री डी.पी.उपाध्याय, बलिया, उ.प्र.

प्रबंध सम्पादक
श्रीमती जया
विज्ञापन प्रबंधक
महेन्द्र कुमार अग्रवाल

ब्यूरो
ब्रज बिहारी ब्रजेश, खीरी
निगम प्रकाश कश्यप, मिर्जापुर, उ.प्र.

सम्पादक
गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

संपादकीय कार्यालय:
एल.आई.जी.–93, नीम सराय कालोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद –211011 का0: 09335155949
ई–मेल:vsnehsamaj@rediffmail.com

सभी पद अवैतनिक हैं
पत्रिका में प्रकाशित रचना का कोई भी पारिश्रमिक देय नहीं है।
प्रिंट लाईन–विश्व स्नेह समाज राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका, यूपीहिन्दी/2001/8380, सर्वाधिकार सुरक्षित है. स्वामी की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुर्न प्रकाशन प्रतिबंधित है. स्वतत्वाधिकारी स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक और संपादक गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी के द्वारा भार्गव प्रेस बाई का बाग, इलाहाबाद से प्रकाशित किया.

नोटःपत्रिका में प्रकाशित रचनाओं, समाचारों इत्यादि से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं हैं. इसके लिए लेखक, रचनाकार, सूचनाकार स्वयं ही उत्तरदायी हैं. जन–जन को सूचना मिलने के उद्देश्य से सभी के विचार, संदेश, आलोचना, शिकायत छापी जाती है. पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी प्रकार के वाद–विवाद का निपटारा केवल इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, की अदालतों में होगा.

गुरु की महिमा

गुरु की धारणा मौलिक रूप से भारतीय है. गुरु जैसा शब्द दुनियां की किसी भाषा में नहीं है. शिक्षक, टीचर, मास्टर, अध्यापक, प्रशिक्षक आदि शब्द है लेकिन गुरु जैसा कोई भी शब्द नहीं है. शिक्षक, अध्यापक आदि शब्द गुरु के पर्यायवाची भी नहीं है. सामान्यतः अध्यापक को ही गुरु मान लिया जाता है लेकिन ऐसा नहीं है. अध्यापक से हमारा संबंध व्यावसायिक होता है. हम विद्यालय तथा विश्वविद्यालय में पढ़ने या कुछ सीखने जाते है, शुल्क देते है तथा शिक्षा पूरी कर अपने काम धंधे में लग जाते है. अधिकाशतः अध्यापक हमें पाठ्यक्रम या किताबी शिक्षा देते है. कुछ अध्यापक ऐसे होते है जो हमें किताबी शिक्षा के अतिरिक्त जीवन जीने की कला सिखाते है. उन्हें हम गुरु कह सकते है. किताबी ज्ञान के अतिरिक्त देने वाली शिक्षा के बदले वे हमसे कुछ नहीं लेते और न अपेक्षा करते है. यानि हम यह कह सकते है कि गुरु से हमारा संबंध अव्यवसायिक होता है क्योंकि जो गुरु देता है उसका कोई मूल्य नहीं है. गुरु हमें अनुभव देता है. गुरु जो कहता है, वह सूचना नहीं है, वह उसके जीवन का आविर्भाव है. गुरु हममें जोड़ता नहीं, हमें मिटाता है और नया निर्मित करता है. गुरु और शिष्य के बीच जो संबंध है वह गहन प्रेम का तथा हार्दिक है. जो गुरु देता है, उसे चुकाने का कोई उपाय नहीं है. गुरु का किसी के जीवन में होना सौभाग्य की बात है.

जो व्यक्ति आपको अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाए वह गुरु होता है. गुरु आत्म विकास और परमात्मा की बात करता है. इसलिए गुरु की महत्ता को ध्यान में रखते हुए ही गुरु के बारे में यह बहुत सुंदर बात कही गयी है.

गुरू गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पांय। बलिहारी गुरू अपने गोविन्द दियो बताय!

अगर इतिहास के पन्नों पर नजर दौड़ायें तो हमें कई जगह पर अपने धार्मिक ग्रंथों और कहानियों में गुरु की भूमिका, उसकी महत्ता और उसके पूरे स्वरूप के दर्शन हो जाएंगे. महाभारत में श्रीकृष्ण अर्जुन के सामने युद्ध के मैदान में गुरु की भूमिका में थे. उन्होंने अर्जुन को न सिर्फ उपदेश दिया बल्कि हर उस वक्त में उसे थामा जब-जब अर्जुन लड़खड़ाते नजर आए. लेकिन आज का अध्यापक इससे अलग है. अध्यापक गुरु हो सकता है पर किसी गुरु को सिर्फ अध्यापक समझ लेना गलत है. ऐसा भी हो सकता है कि सभी अध्यापक गुरु कहलाने लायक न हों, हजारों में से मुट्ठीभर अध्यापक आपको गुरु मिलेंगे.

ओशो के शब्दों में अगर कहे तो शिक्षक किसी भी व्यक्ति की आत्मा को नहीं जगा पाता जबकि गुरु वह है जो किसी की आत्मा को जगा दे, किसी के व्यक्तित्व को गरिमा दे दे. गुरु की जीवन में बड़ी महिमा है. वह उस रोशनी के समान हैं जो अंधेरे जीवन में प्रकाश लाते हैं.

सब धरती कागज करूँ, लिखनी सब बनराय। सात समुद्र की मसि करूँ, गुरु गुण लिखा न जाय।।

सबसे अंत में मैं यही कहूंगा-

गुरू यह दुनिया, दुनिया न होती, गर खुदा का नूर न होता
यह दुनिया कितनी बेजान होती, गर संगीत का सुर न होता
खुदा खुदा न होता, संगीत संगीत न होता,
गर इस दुनिया में गुरूओं का गुर न होता!

जय हिन्द जय हिन्दी

गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी

हिन्दी के योद्धा : राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन

राजर्षि में बाल्यकाल से ही हिन्दी के प्रति अनुराग था. इस प्रेम को बालकृष्ण भट्ट और मदन मोहन मालवीय जी ने प्रौढ़ता प्रदान करने की. 10 अक्टूबर 1910 को काशी में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन महामना मालवीय जी की अध्यक्षता में हुआ और टण्डन जी सम्मेलन के मंत्री नियुक्त हुए.

-प्रो. अमरनाथ

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के अग्रणी पंक्ति के नेता राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन (1.8.1882—1.7.1962) का राजनीति में प्रवेश हिन्दी प्रेम के कारण ही हुआ. 17 फरवरी 1951 को मुजफ्फरनगर 'सुहृद संघ' के 17वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर टण्डन जी ने कहा था- 'हिन्दी के पक्ष को सबल करने के उद्देष्य से ही मैंने कांग्रेस जैसी संस्था में प्रवेश किया, क्योंकि मेरे हृदय पर हिन्दी का ही प्रभाव सबसे अधिक था और मैंने उसे ही अपने जीवन का सबसे महान व्रत बनाया.. हिन्दी साहित्य के प्रति मेरे (उसी) प्रेम ने उसके स्वार्थों की रक्षा और उसके विकास के पथ को स्पष्ट करने के लिए मुझे राजनीति में सम्मिलित होने को बाध्य किया.'

राजर्षि में बाल्यकाल से ही हिन्दी के प्रति अनुराग था. इस प्रेम को बालकृष्ण भट्ट और मदन मोहन मालवीय जी ने प्रौढ़ता प्रदान करने की. 10 अक्टूबर 1910 को काशी में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन महामना मालवीय जी की अध्यक्षता में हुआ और टण्डन जी सम्मेलन के मंत्री नियुक्त हुए. तदनन्तर हिन्दी साहित्य सम्मेलन के माध्यम से हिन्दी की अत्यधिक सेवा की. टण्डन जी ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी विद्यापीठ प्रयाग की स्थापना की. इस पीठ की स्थापना का उद्देश्य हिन्दी शिक्षा का प्रसार और अंग्रेजी के वर्चस्व को समाप्त करना था. सम्मेलन हिन्दी की अनेक परीक्षाएँ सम्पन्न करता था. इन परीक्षाओं से दक्षिण में भी हिन्दी का प्रचार प्रसार हुआ. सम्मेलन के इस कार्य का प्रभाव महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में भी पड़ा, अनेक महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पाठ्यक्रम को मान्यता मिली. वे जानते थे कि सम्पूर्ण भारत में हिन्दी के प्रसार के लिए अहिन्दी भाषियों का सहयोग अपेक्षित है. शायद उनकी इसी सोच का परिणाम था सम्मेलन में गाँधी का लिया जाना. आगे चलकर 'हिन्दुस्तानी' के प्रश्न पर टण्डन जी और महात्मा गाँधी में मतभेद हुआ. गाँधी जी हिन्दुस्तानी के समर्थक थे. उन्होंने गुजरात शिक्षा सम्मेलन, भड़ौच में 20 अक्टूबर 1917 को दिए गए अपने भाषण में कहा है, 'ऐसी दलील दी जाती है कि हिन्दी और उर्दू दो अलग अलग भाषाएं हैं. यह दलील सही नहीं है. उत्तर भारत में मुसलमान और हिन्दू दोनो एक ही भाषा बोलते हैं. भेद पढ़े लिखे लोगों ने डाला है. इसका अर्थ यह है कि हिन्दू शिक्षित वर्ग ने हिन्दी को केवल संस्कृमय बना दिया है. इस कारण कितने ही मुसलमान उसे समझ नहीं सकते. लखनऊ के मुसलमान भाइयों ने उर्दू में फारसी भर दी है और उसे हिन्दुओं के समझने के अयोग्य बना दिया है. ये दोनो केवल पंडिताऊ भाषाएं हैं, और उनको जनसाधारण में कोई स्थान प्राप्त नहीं है. (संपूर्ण गाँधी वाँग्मय, खण्ड-14, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, 1965, पृष्ठ-20—20)

इस विषय पर लम्बे समय तक टण्डन जी और महात्मा गाँधी के बीच पत्र व्यवहार होता रहा. टंडन जी हिन्दी के समर्थक थे-अपेक्षाकृत संस्कृतनिष्ठ हिन्दी के. डा. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार तो काँग्रेस की बैठक में होने वाले मतदान में 78 के मुकाबले 77 वोटों से हिन्दुस्तानी हार गई और वह एक वोट सभाध्यक्ष डा. राजेन्द्र प्रसाद का था. डा. अम्बेडकर ने अपने एक व्याख्यान में कहा हैं, 'भारतीय संविधान के प्रारूप पर विचार करते हुए हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में अंगीकृत किए जाने के प्रश्न पर कांग्रेस पार्टी मीटिंग में क्या हुआ, यदि मैं इस बात को अब जनता को बताऊं तो शायद रहस्योद्घाटन का

दोष मुझे नहीं दिया जाएगा. इस प्रश्न से संबंधित धारा 15 से अधिक विवादास्पद कोई दूसरी धारा नहीं थी. इससे अधिक विरोध किसी धारा का नहीं हुआ. इससे अधिक गरमागरमी किसी धारा पर नहीं हुई. एक लम्बे विवाद के बाद जब इस प्रश्न पर मतदान हुआ, दोनो पक्ष में 78 मत थे. राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी को स्थान एक मत से मिला. ये तथ्य मैं अपनी व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर सामने रख रहा हूँ. प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में काँग्रेस पार्टी में मेरा स्वाभाविक प्रवेश था. (अम्बेडकर भीमराव, थाट्स ऑन लिंग्विस्टिक स्टेट्स, डा. बाबा साहेब अंबेडकर -राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खण्ड-1, सं. बसंत मून, एजूकेशन डिपार्टमेंट, गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र, 1989, पृष्ठ-148) यद्यपि इस बारे में कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि कांग्रेस की जिस मीटिंग का उल्लेख डा. अम्बेडकर ने किया है वह किस तारीख को और कहाँ हुई थी. जे. आर. कपूर ने तो यहाँ तक लिखा है कि कांग्रेस की इस तरह की किसी मीटिंग की कोई प्रामाणिक सूचना नहीं मिलती जिसमें हिन्दी और हिन्दुस्तानी को लेकर मतदान हुआ हो. 'देयर बीइंग प्रेक्टिकल यूनानिमिटी ऑन द क्वेश्चन ऑफ हिन्दी वीइंग द ऑफिशियल लैंग्वेज ऑफ द यूनियन, देयर वाज नेवर एनी ऑकेजन फॉर इट टू बी पुट टू वोट इन एनी कांस्चूयेन्ट असेम्बली कांग्रेस पार्टी मीटिंग.'

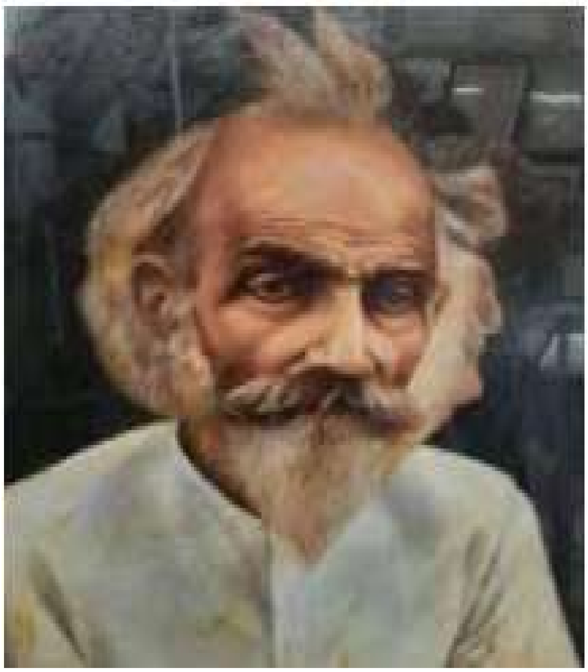

इसके बाद जैसे जैसे आजादी करीब आती गई दो राष्ट्रों के सिद्धांत को बल मिलता गया और साम्प्रदायिकता बाढ़ की तरह उफनती गई. मुस्लिम लीग ने संविधान सभा का बहिष्कार किया. जुलाई 1947 में कांग्रेस ने देश विभाजन को सिद्धांत रूप में स्वीकार कर लिया. ऐसी दशा में हिन्दी और हिन्दुस्तानी के मसले को नए ढंग से देखा जाने लगा. नेताओं ने उर्दू को भी विभाजन को बढ़ावा देने वाली भाषा के रूप में देखा और इस तरह हिन्दी और उर्दू को हिन्दू और मुस्लिम से जोड़कर देखने वालो की संख्या बढ़ती गई. अंततः गाँधी जी के समन्वय और धर्मनिरपेक्षतावादी दृष्टिकोण के पक्ष में आवाजें मंद पड़ती गईं और 17 जुलाई 1947 को संविधान सभा के बाहर कांग्रेस की मीटिंग में हिन्दी और हिन्दुस्तानी को लेकर मतदान हुआ जिसमें 32 के मुकाबले 63 वोटों से हिन्दी की जीत हुई. एक दूसरे मतदान में देवनागरी के पक्ष में 63 और विरोध में 18 मत पड़े. जाहिर है सन् 1949 में 11 से 14 सितंबर तक चलने वाली बैठक में देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया. भाषा संबंधी इस मुद्दे को ऐतिहासिक परिणति तक पहुँचाने में राजर्षि टण्डन की भूमिका अन्यतम थी.

टंडन जी को गाँधी जी ने 25.05. 1945 को लिखे अपने पत्र में कहा है, 'मेरे पास उर्दू में खत आते हैं, हिन्दी में आते हैं और गुजराती में. सब पूछते हैं कि, मैं कैसे हिन्दी साहित्य सम्मेलन में रह सकता हूँ और हिन्दुस्तानी भाषा में भी? वे कहते हैं, सम्मेलन की दृष्टि में हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है. जिसमें नागरी लिपि को ही राष्ट्रीय स्थान दिया जाता है. जब मैं सम्मेलन की भाषा और नागरी लिपि को पूरा राष्ट्रीय स्थान नहीं देता हूँ तब मुझे सम्मेलन में से हट जाना चाहिए. ऐसी दलील मुझे योग्य लगती है. इस हालत में क्या सम्मेलन से हटना मेरा फर्ज नहीं होता है? ऐसा करने से लोगों को दुविधा न रहेगी और मुझे पता चलेगा कि मैं कहाँ हूँ. "जवाब में टण्डन जी ने 8. 05.1945 को गाँधी जी को लिखा, 'पूज्य बापूजी, आप का 25 मई का पत्र मुझे मिला. आप को स्वयं हिन्दी साहित्य सम्मेलन का सदस्य रहते

हुए लगभग 27 वर्ष हो गए. इस बीच आपने हिन्दी प्रचार का काम राष्ट्रीयता की दृष्टि से किया. वह सब काम गलत था, ऐसा तो आप नहीं मानते होंगे. राष्ट्रीय दृष्टि से हिन्दी का प्रचार वांछनीय है, यह तो आप का सिद्धांत है ही. आप के नए दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू-शिक्षण का भी प्रचार होना चाहिए. यह पहले काम से भिन्न एक नया काम है, जिसका पिछले काम से कोई विरोध नहीं है.

सम्मेलन हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानता है. उर्दू को वह हिन्दी की एक शैली मानता है, जो विशिष्टजनों में प्रचलित है. स्वयं वह हिन्दी की साधारण शैली में काम करता है, उर्दू शैली का नहीं. आप हिन्दी के साथ उर्दू को भी चलाते हैं. सम्मेलन उसका तनिक भी विरोधा नही करता. किन्तु, राष्ट्रीय कामों में अंग्रेजी को हटाने में वह उसकी सहायता का स्वागत करता है. भेद केवल इतना ही है कि आप दोनो चलाना चाहते हैं. सम्मेलन आरंभ से केवल हिन्दी चलाता आया है. हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सदस्यों को हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के सदस्य होने से रोक नहीं है. हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से निर्वाचित प्रतिनिधि हिन्दुस्तानी एकैडमी के सदस्य हैं और हिन्दुस्तानी एकैडमी हिन्दी और उर्दू दोनो शैलियाँ और लिपियाँ चलाती है. इस दृष्टि से मेरा निवेदन है कि मुझे इस बात का कोई अवसर नहीं लगता कि आप सम्मेलन छोड़ें. मुझे जो बात उचित लगी, ऊपर निवेदन किया किन्तु यदि आप मेरे दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं और आप की आत्मा यही कहती है कि सम्मेलन से अलग हो जाऊं तो आप के अलग होने की बात पर बहुत खेद होते हुए भी नतमस्तक हो आप के निर्णय को स्वीकार करूंगा.'

विनीत, पुरुषोत्तमदास टण्डन (उद्धृत, हिन्दी राष्ट्रभाषा से राजभाषा तक, विमलेश कान्ति वर्मा, पृष्ठ-43)

गाँधी जी ने टण्डन जी के उक्त पत्र का विस्तार से जवाब अपने 13.06. 1945 को लिखे पत्र में दिया इसके बाद फिर टंडन जी ने लगभग पाँच पृष्ठ का पत्र गाँधी जी को लिखा. इस तरह लम्बे पत्राचार के बाद अन्ततः सेवाग्राम से 25.07.1945 को गाँधी जी को लिखना पड़ा, 'आप का ता. 11.7.45 का पत्र मिला. मैने दो बार पढ़ा. बाद में भाई किशोरीलाल को दिया. वे स्वतंत्र विचारक हैं, आप जानते होंगे. उन्होंने जो लिखा है सो भी भेजता हूँ. मैं तो इतना ही कहूंगा, जहां तक हो सका मैं आप के प्रेम के अधीन रहा हूँ. अब समय गया है कि वही प्रेम मुझे आप से वियोग कराएगा. मैं अपनी बात नहीं समझा सका हूँ. यही पत्र आप सम्मेलन की स्थाई समिति के पास रखें. मेरा ख्याल है कि सम्मेलन ने मेरी हिन्दी की व्याख्या अपनायी नहीं है. अब तो मेरे विचार इसी दिशा में आगे बढ़े हैं. राष्ट्रभाषा की मेरी व्याख्या में हिन्दी और उर्दू लिपि और दोनो शैलियों का ज्ञान आता है. ऐसा होने से ही दोनों का समन्वय होने का है तो हो जाएगा. मुझे डर है कि मेरी यह बात सम्मेलन को चुभेगी. इसलिए मेरा स्तीफा कबूल किया जाय. हिन्दुस्तानी प्रचार सभा का कठिन काम करते हुए मैं हिन्दी की सेवा करूँगा और उर्दू की भी.' (उद्धृत, उपर्युक्त, पृष्ठ-50)

और इस तरह हिन्दुस्तानी और हिन्दी के विवाद में महात्मा गाँधी का दशकों पुराना संबंध हिन्दी साहित्य सम्मेलन से टूट गया. हिन्दी के स्वरूप को लेकर उन दिनों काँग्रेस के भीतर ही दो गुट हो गए- एक गाँधीजी की हिन्दुस्तानी का पक्ष धर और दूसरा टण्डन जी की हिन्दी का. राजर्षि टण्डन के संघर्ष का ही परिणाम था कि गाँधी, नेहरू, मौलाना अबुलकलाम आजाद आदि द्वारा हिन्दुस्तानी के समर्थन के बावजूद काँग्रेस की बैठक में होने वाले मतदान में 78 के मुकाबले 77 वोटों से हिन्दुस्तानी हार गई. इसके बाद जैसे जैसे आजादी करीब आती गई, दो राष्ट्रों के सिद्धांत को बल मिलता गया और साम्प्रदायिकता बढ़ती गई. स्वाभाविक था हिन्दी और उर्दू को हिन्दू और मुस्लिम से जोड़कर देखने वालों की संख्या बढ़ती गई और अंततः गाँधी जी के समन्वय और धर्मनिरपेक्षतावादी दृष्टिकोण के पक्ष में आवाजें मंद पड़ती गईं. इस बीच देश विभाजित हो चुका था और पाकिस्तान उर्दू को अपनी राष्ट्रभाषा घोषित कर चुका था. जाहिर है सन् 1949 में 11 से 14 सितंबर तक लगातार चलने वाली बहस के बाद संविधान सभा ने देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया.

प्रसिद्ध साहित्यकार लक्ष्मीनारायण सुधांशु हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति राजर्षि टण्डन के योगदान का उल्लेख करते हुए लिखते हैं- 'उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य क्षेत्र में कोई

सर्जनात्मक कृति नहीं दी है, कुछ तुकबन्दियों तथा लेखों के अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं लिखा. लेकिन उनकी वास्तविक कृति है अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का संगठन. इसके द्वारा उन्होंने हिन्दी साहित्य की परीक्षाओं का जो संचालन किया, उससे साधारण जनता में हिन्दी साहित्य के प्रति अभिरुचि, साहित्य की जानकारी और लोक साहित्य में जागृति की भूमिका बनी. सम्मेलन की परीक्षाओं का जाल सम्पूर्ण भारत में बिछ गया. सन् 1910—1950 के मध्य राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार का श्रेय टण्डन जी को है. इसीलिए लोग उन्हें राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्राण कहा करते थे."

सन् 1949 में जब संविधान सभा में राजभाषा सम्बंधी प्रश्न उठाया गया तो उस समय एक विचित्र स्थिति थी. पं० नेहरू, अबुलकलाम आजाद जैसे अनेक नेता हिन्दुस्तानी के पक्षधर थे. वहाँ गाँधीजी का बार-बार हवाला दिया गया. मो. इस्माइल ने गाँधी जी के एक लेख का हिस्सा उद्धृत किया, 'भारत के करोड़ो ग्रामीणों को पुस्तकों से कोई मतलब नहीं है. वे हिन्दुस्तानी बोलते हैं जिसे मुस्लिम उर्दू में लिखते हैं तथा हिन्दू उर्दू लिपि या नागरी लिपि में लिखते हैं. अतएव मेरे और आप जैसे लोगों का कर्तव्य है कि दोनो लिपियों को सीखें.' (संविधान सभा में 14 सितंबर को दिए गए भाषण से) परन्तु टण्डन जी झुके नहीं. 11, 12, 13, 14 दिसम्बर 1949 को गरमागरम बहस के बाद हिन्दी और हिन्दुस्तानी को लेकर सदन में मतदान हुआ और अन्ततः देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी संघ की राजभाषा घोषित हुई. 'हिन्दी राष्ट्रभाषा क्यों', 'मातृभाषा की महत्ता', 'भाषा का सवाल', 'गौरवशाली हिन्दी', 'हिन्दी की शक्ति', 'कवि और दार्शनिक' आदि विषयों पर टण्डन जी के निबंध प्रकाशित हैं.

पुरुषोत्तमदास टण्डन के बहु आयामी और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व को देखकर उन्हें 'राजर्षि की उपाधि से विभूषित किया गया. 15 अप्रैल सन् 1948 की संध्यावेला में सरयू तट पर वैदिक मंत्रोच्चार के साथ संत देवरहा बाबा ने उन्हें 'राजर्षि की उपाधि से अलंकृत किया.

भारत सरकार ने उन्हें देश का सर्वोत्तम सम्मान 'भारत रत्न' से विभूषित किया. आज उनके जन्मदिन पर हम हिन्दी के लिए किए गए उनके महान योगदान का स्मरण करते हैं और उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं.

आवश्यक सूचना

सितंबर माह में हिन्दी मासिक विश्व स्नेह समाज क २०वर्ष पूर्ण कर २१वें वर्ष में प्रवेश करेगी तथा विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान की रजत स्मारिका यानि दोनों का संयुक्त रुप में रंगीन आवरण युक्त ५०० पृष्ठीय(सम्भावित) अंक प्रकाशित किया जाएगा। जिसमें देश-विदेश के हिन्द प्रेमियों की शुभ्कामनाएं तथा देश के विभिन्न राज्यों के प्रतिष्ठित लेखकों के आलेख भी प्रकाशित होगें। अगर आप भी अपनी फर्म/कंपनी/उत्पाद/ महाविद्यालय/विद्यालय का विज्ञापन या शुभकामना देना चाहते है तो स्वागत है. सामग्री 15.08.2021 के पूर्व देने की कष्ट करें।

विज्ञापन दर

विवरण	**स्वेत/श्याम**	**रंगीन**
अंतिम आवरण	-	25000/रुपये
आवरण 2 व 3	10000/रुपये	20000/रुपये
सामान्य पृष्ठ	8000/रुपये	12000/रुपये
न्यूनतम दर	2500/रुपये	1500/रुपये

यांत्रिक विवरणः

पृष्ठ का आकार स्तर : 4.5 X 7.5 वर्ग इंच 11.5 X 19 वर्ग सेमी

सामान्य पृष्ठ : 4.2 X 7 वर्ग इंच/10.5 X 18 वर्ग सेमी

विशेषः खाता धारक : विश्व स्नेह समाज, **खाता संख्या**—66600200000154, **आईएफएससी कोड**—बीएआरबी0वीजेपीआरईई (BARB0VJPREE (0-ZERO) सीधे खाते में जमा, आरटीजीएस, नेफ्ट, ऑन लाइन स्थानान्तरण कर, जमा पर्ची की कापी व पत्र व्यवहार का पता ई—मेल या ह्वाट्सएप कर देवें।

प्रकृति सौन्दर्य के साधक महाकवि कालिदास

पुरातन ग्रंथों में प्रकृति को विशेष जगह दी गई है. पूर्वजों ने पर्यावरण संतुलन के लिए जगह-जगह पौधे लगाये. तथा साहित्यकारों के हृदय में प्रकृति के प्रति सदैव ही विशेष लगाव रहा है.

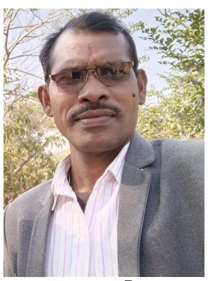

- डा० चंद्रशेखर सिंह
विभागाध्यक्ष हिन्दी
डा.जे.पी.मिश्र शासकीय विज्ञान
महाविद्यालय, मुंगेली, छत्तीसगढ़
cssinghc7@gmail.com

प्रकृति और मानव जीवन का अटूट रिश्ता रहा है. मानव मन की सौन्दर्य चेतना यहीं पर निखरती है और संस्कार आकार पाता है. भारतीय संस्कृति में प्रकृति की आकृति खिली-खिली दिखती है. प्रकृति पर्यावरण का अहम हिस्सा है. प्रकृति के रूप सौंदर्य ने सबको आकर्षित किया है. प्रकृति के प्रति कवियों का अनुराग बड़ा ही पुनीत रहा है. साहित्य ने प्रकृति को संवारा है, वहीं प्रकृति ने साहित्य को नूतन किया है, तरोताजा किया है. भारतीय संस्कृति और साहित्य का सदैव दर्शन रहा है-

१) प्रकृति के प्रति अनुराग,
२) प्रकृति संरक्षण की चिंता,
३) प्रकृति में अपनी आकृति ढूंढना,
४) प्रकृति में नित नवीन भावों की खोज,
५) प्रकृति से साहचर्य स्थापित करना

नारद पुराण में कहा गया है- 'स्वास्थ्य के लिए पौधारोपण, तालाब एवं कुंड की स्वच्छता अनिवार्य है.' पुरातन ग्रंथों में प्रकृति को विशेष जगह दी गई है. पूर्वजों ने पर्यावरण संतुलन के लिए जगह-जगह पौधे लगाये. तथा साहित्यकारों के हृदय में प्रकृति के प्रति सदैव ही विशेष लगाव रहा है.

महाकवि कालिदास जी तो प्रकृति के पुजारी हैं. प्रकृति के पावन विचार उनके आसपास उमड़ते-घुमड़ते हैं. उन्होंने प्रकृति के हर रूप को निहारा है और साहित्य के कैनवास में व्यापकता से उतारा है. उनकी प्रसिद्ध रचनाएं 'कुमारसंभव' और 'रघुवंश' महाकाव्य में प्रकृति प्रेम की अजस्र उर्मियां बहती हैं. 'कुमारसंभव' महाकाव्य का हिमालय वर्णन संस्कृत साहित्य ही नहीं अपितु विश्व साहित्य में विशिष्ट स्थान रखता है. 'मालविकाग्निमित्र', 'विक्रमोर्वशीयम्' और 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' जो अंतिम तथा प्रौढ़ और विकसित रचना है. 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' नाटक में भी वे प्रकृति के प्रति लगाव नहीं छोड़ पाते. प्रकृति प्रेम उनकी लेखनी का हिस्सा रहा है.

उनकी प्रथम कृति 'ऋतुसंहार' वह खंडकाव्य है, जिनका सृजन ही प्रकृति पर केंद्रित है. इसमें वर्णित छः ऋतुएं (ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर और वसंत) अपने भव्य रूप में, नव्य रुप में हमें आकर्षित करती हैं. इसमें प्रकृति के कोमल ही नहीं वरन् कठोर रुप के भी दर्शन होते हैं. यह प्रकृति का मूल आधार है. प्रकृति प्रवृत् 'मेघदूत' (गीतिकाव्य) तो कविश्रेष्ठ कालिदास जी की कालजयी रचनाओं में से एक है. यह रचना उनकी काव्य प्रतिभा का उत्कर्ष है. उन्होंने मेघ मार्ग में भारतभूमि का जो दृश्य उपस्थित किया है, वह बड़ा ही मनोरम है, हृदयग्राही है. आत्मानुभूति पर आधारित उनका प्रकृति चित्रण कठोर की अपेक्षा कोमल और मधुर अधिक है. प्रकृति के अनन्य उपासक एवं प्रकृति सौंदर्य के साधक कविश्रेष्ठ कालिदास जी के प्रकृति चित्रण अद्भुत कलाओं से सम्पन्न है. उनकी लेखनी से निकलने वाली कल्पना सुगंध से वातावरण खुशनुमा हो जाता है.

'पर्वत...
पानी...
धरा...
आसमान...
पुष्प...
और पौधे की गाथाएं,
आषाढ़ का प्रथम दिवस
और मेघ की सुदूर यात्राएं..."

चिंतन में आते ही चेतना हरी-भरी हो जाती है.

कविवर कालिदास की प्रकृति प्रेम

अद्‌भुत है.
उनकी रचनाएं हमें बार–बार प्रेरित करती हैं. प्रकृति से लगाव, हमारे स्वभाव में शामिल हो जाना चाहिए. जिसका प्रभाव सदैव सकारात्मक होगा. पूर्वजों ने प्रकृति की पूजा की. प्रकृति का सम्मान किया. प्रकृति के संग होकर चले. प्रकृति की सुरक्षा के लिए अपना सर्वस्व समर्पण किए. लेकिन वर्तमान जीने के ढंग ने वातावरण और परिवेश को बदल दिया है, जो चिंता का कारण है.
हम जानते हैं आज प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है. पहले धरती उपजाऊ थी, आज बहुत बदलाव देखने को मिल रहा है. पहले ऋतुओं का चक्र नियमबद्ध था. कालिदास जी के ‘ऋतुसंहार’ में इसका उदाहरण मिल जाता है.
अब आषाढ़ में बादल रूठ जाता है और ठंड में भी पानी की रिमझिम फुहारें होने लगती हैं. कभी अकाल से पीड़ित, तो कभी अनावृष्टि से जन हताहत हो जाते हैं. निदा फ़ाज़ली के शब्दों को यहां कहना उपयुक्त समझता हूं–

‘धूप भरी छत पर
बरस गया पानी
छप्पर की कुटिया न कुंजी न ताले
जब चाहे बरसात नींदें चुरा ले
रोटी को बेलें या घर को संभाले
जलते तवे पर
झुलस गया पानी
बरस गया पानी।’

हमारे पूर्वजों को इन परिणामों की परख थी तभी तो जल, हवा, अग्नि, धरा, नभ और वृक्षों को देवता कहा और देव की तरह इनकी पूजा की, इनकी सुरक्षा की. प्रकृति के सम्मान और संवर्धन ने पर्यावरण को संतुलित रखा. यह बात किसी से छिपी नहीं है. फिर भी हुई भूल को हम क्यों भूलते हैं.
महाकवि कालिदास जी के चिन्तन से अपनी चेतना को जागृत करें. उनकी रचनाओं में प्रकृति के प्रति स्थापित प्रेम को पुनः पुष्ट करें. उनके संदेश को सहजता से स्वीकारें. आज इसकी महती आवश्यकता है. सार में कहूं तो दुष्यंत जी की बातें यहां सटीक जान पड़ती हैं–

‘तेरा निज़ाम है, सिल दे जुबान शायर की।
ये एहतियात जरूरी है, इस बहर के लिए।
जियें तो अपने बगीचे में, गुलमोहर के तले।
मरे तो गैर की गलियों में, गुलमोहर के लिए।’

संदर्भ–
१) kalidaskavitakosh.org
२) नया ज्ञानोदय में निंदा फ़ाज़ली की ’बरस गया पानी’, संपादक– लीलाधर मंडलोई, नई दिल्ली।
३) हिन्दी काव्य संकलन–3, दुष्यंत की रचना, संपादक– चंद्रकांत देवताले, हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल।

सावन उत्सव मनाए एक पेड़ लगाए

समाजिक सेवा एवम् शोध संस्थान प्रयागराज के सदस्यो ने कई प्रकार के पेड़ और पौधे लगाकर पर्यावरण का संदेश दिया. साथ मे कबाड़ से जुगाड़ पर एक कार्यक्रम आयोजन किया. जिसके अंतर्गत बताया की घर पर रक्खे बेकार मिट्टी के बर्तन मे पौधौ रोपण कर बर्तन जो बेकार दिख रहा है वह बेकार बर्तन पर्यावरण के लिए कितना महत्वपूर्ण स्थान रखता है. बच्चों को पर्यावरण संरक्षण कर जागरूक किया. इस कार्यक्रम में शीवा कांत, उदय, राम प्रकाश आदि मालियों ने बताया कि कौन कौन से पौधे घर पर, बाहर लगाना चाहिए. साथ में किस प्रकार से लगाना चाहिए सभी जानकारी विस्तार से सरल ढंग से बताई. सोनम पांडेय, अर्चना, श्रुती, टुक्कू ने अपने अपने विचार से पर्यावरण का महत्व बताया. सामाजिक सेवा एवम् शोध संस्थान की अध्यक्ष श्रीमती डॉ० रश्मि शुक्ला ने कहा कि जब पेड़ लगाना, तब सावन मनाना, मास्क लगाओ, जीवन बचाओ. सोनम ने कहा की कोरोना महामारी से हमको सीख लेनी चाहिए कि ऑक्सीजन की पूर्ति पेड़ से होती है इसलिए हर एक व्यक्ति को पेड़ लगाना है. वर्षा ऋतु में पेड़ जल्दी पनपतें हैं. उपलब्ध भी आसानी से हो जाते हैं. लाइन्स क्लब, अखिल भारतीय महिला परिषद आदि ने अपनी सहभागिता की. कार्यक्रम का समापन सावन गीत–संगीत से हुआ.

आदर्श समाज की स्थापना करती डा. अखिलेश पालरिया की कहानिया

शोधार्थी : कीर्ति शर्मा,
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान

वैश्वीकरण के इस दौर में जिस तेजी से मानवीय आकांक्षाओं को पंख लगे हैं, उसी तेजी से मानव के स्वार्थ और उनकी पूर्ति के लिए अपराध, धोखा, भ्रष्टाचार एवं चरित्रहनन के मामले भी बढ़े हैं. इन सबके चलते समाज का चेहरा इतना क्रूर और भयानक होता जा रहा है कि एक सीधे-सादे आम आदमी को लगता है कि यह दुनिया अब उसके रहने लायक नहीं रही है. हिंदी साहित्य में यथार्थवाद को स्थापित करने के पक्षधर साहित्यकारों ने समाज की इस विकृत तस्वीर को अपने तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास भी किया है. इनके चलते धन के भ्रष्टाचार के साथ तन के भ्रष्टाचार की कहानियों के साथ पारिवारिक कलह, भाई-भाई, पिता-पुत्र और ननद-भौजाई के विरुद्ध रचे जाने वाले षड्यंत्रों के अलावा इनमें होने वाले अपराधों की अनेकानेक कथाएं हमारे सामने आती रहती हैं. परंतु इन क्रूर स्थितियों और भयानक वातावरण को चित्रित करती कहानियों के बीच आदर्श समाज की स्थापना करती कहानियां भी रची जा रही हैं. भले ही ऐसे कहानीकारों की संख्या कम है, जो इस विकराल समय में भी सकारात्मक सोच के साथ आशा और विश्वास की डोर थामे ऐसी शुद्ध सात्विक एवं पारिवारिक माहौल की कहानियां रच रहे हैं, जो हमें एक आदर्श समाज की ओर ले जाती हैं. ऐसे ही एक कहानीकार हैं डा. अखिलेश पालरिया. राजस्थान में अजमेर निवासी डा. अखिलेश पालरिया की कहानियां समाज को एक नई दिशा देने में सक्षम हैं. उनकी कहानियां हमें बताती हैं कि निरंतर गिरते जा रहे सामाजिक मूल्यों के बावजूद अभी संवेदनाओं की भूमि ने भावनाओं के फूल खिलाना बंद नहीं किया है.

अब तक सौ से अधिक कहानियां रच चुके डा. अखिलेश पालरिया के सात कहानी संग्रह आ चुके हैं और देशभर की अनेकानेक पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कहानियां प्रकाशित होती रहती हैं. डा. अखिलेश पालरिया आदर्शवाद की उर्वरा भूमि पर संवेदनाओं के फूल खिलाते हैं. वे समाज में घटने वाली बुरी घटनाओं की कुरूपताओं से बहुत दूर एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जहां, सब कुछ अच्छा ही अच्छा है. सुंदर ही सुंदर. असुंदर को डा. अखिलेश पालरिया अपने नजदीक भी नहीं आने देना चाहते. जाहिर है कि जो वे अपने नजदीक नहीं आने देना चाहते, अपने पाठकों को भी उससे बचाकर रखना चाहते हैं. उनकी कहानियों में समाज की आदर्शवादी स्थितियों का बहुत खूबसूरती के साथ वर्णन किया गया है और इसी के साथ कहानी की संवेदना भी बहुत मार्मिक होकर पाठक को अच्छा और अच्छा ही सोचने को विवश कर देती है. डा. पालरिया की कहानियों को पढ़ते हुए पाठक एक ऐसे संसार में विचरने लगता है जो स्वर्ग से भी सुंदर है. यही सकारात्मकता और उनकी संवेदनशील

सोच डा. पालरिया को विखंडित होते समाज की कहानियों के रचयिताओं से अलग एक सुनहरे संसार की कहानियों के सृजनहार के रूप में स्थापित करती है. उनकी कहानियां पाठक के मन में एक नए आशावाद का संचार करती हैं और विश्वास दिलाती हैं कि नहीं, अभी यह दुनिया इतनी बुरी नहीं हुई है कि आप इसे सिरे से ही खारिज कर दें. यह दुनिया अच्छे लोगों से भी भरी हुई है और जब तक अच्छे लोग इस दुनिया में हैं, तब तक इस दुनिया की खूबसूरती कोई छीन नहीं सकता. यह दुनिया इन्हीं अच्छे लोगों के संग-साथ से वापस उस युग की ओर लौटती प्रतीत होती है जिसे हमारे पुरखों ने रामराज का नाम दिया था. शायद इसी का एक नाम सतयुग भी है. सकारात्मक सोच और खूबसूरती से सजी कहानियों में से एक उदाहरण प्रस्तुत है-

''मां, मैं कितनी नासमझ, कितनी गलत थी. तुम सही कहती थीं कि अच्छे-बुरे आदमी हर वर्ग में मिलते

हैं, किन्तु आज मुझे दुख हो रहा है कि मैंने सदैव आवरण ओढ़कर डाक्टरों को घृणा की दृष्टि से देखा. पता नहीं, मेरी सोच, डाक्टरों के प्रति नकारात्मक किस तरह विकसित हो गई थी और मैं उन्हें हमेशा कोसती ही रही. किन्तु आज मैंने सचमुच डाक्टर के रूप में दूसरे भगवान को देखा है.''1

बात-बात पर लडने-झगडने वाले लोगों के बीच रहने वाले लोग भी अक्सर बिना वजह ही परेशान हो जाते हैं. होता यही है कि जब पति-पत्नी में आए दिन झगड़ा होता है तो उसकी सजा या तो बच्चों को भुगतनी पड़ती है और या फिर बूढ़े मां-बाप को. कई बार तो बेकसूर भाई-बहन भी इस झगड़े में पिस जाते हैं. दोस्त और रिश्तेदार भी किसी दिन इस झगड़े के शिकार हो जाएं तो आश्चर्य नहीं होता. ऐसा भी हमारे साथ बहुत बार होता है कि जब पति-पत्नी के झगड़े से पूरे परिवार को अपमान का घूंट पीना पड़ जाता है. ऐसे में उनका सारा समय इन झगड़ों को निपटाने में ही गुजर जाता है. कई बार तो ऐसा भी होता है कि इन झगड़ों की वजह से उस दम्पती के आसपास रहने वाले लोग भी बिना वजह ही तनावग्रस्त रहने लगते हैं. ऐसे ही कुछ बेकसूर लोगों की संवेदना को डा. पालरिया अपनी कहानी 'आखिर मन ही तो है' में पकड़ते हैं. सिर्फ पकड़ते ही नहीं, अपितु उसके समाधान तक पहुंचाने की जिम्मेवारी भी लेते हैं, जिससे अमूमन कहानीकार बचने का प्रयास किया करते हैं.

हिंदी कहानी की यह विडम्बना ही है कि अधिकतर कहानियों में समस्या को उठाया तो बहुत जोर-शोर से जाता है, लेकिन जब पाठक उस समस्या का समाधान चाहने की स्थिति में पहुंचता है तो कहानीकार चुपके से खिसक जाता है और कहानी का नाटकीय अंत करके अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेता है। परंतु डा. पालरिया इस मामले में बेहद संवेदनशील हैं. वे कहानी में जिस समस्या को उठाते हैं, उसके समाधान का रास्ता भी सुझाते हैं. तभी तो कहानी की संवेदना अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त करती है. आलोच्य कहानी 'आखिर मन ही तो है' में समस्या की ओर संकेत करते हुए वे रोज की इस खिच-खिच से परेशान होकर सोचते भी हैं-

''लौटते समय मैं पूरे रास्ते आंखें बंद किए शेखर व स्नेहा भाभी जी की अंतर्वेना से स्वयं को उनकी मनःस्थिति से आत्मसात् कर उसे प्रत्यक्ष अनुभव कर रहा था. मन में एक प्रश्न उठा-परिवार में पति-पत्नी के बीच अहं की लड़ाई की वेदना परिवार के अन्य सदस्यों को भी भुगतनी पड़ती है. ऐसे लोगों को विवाह नहीं करना चाहिए जिनमें समझौतों का सामंजस्य न हो.''२

यहां भी डा. पालरिया की संवेदना कहानी को एक आदर्श मोड़ देकर सामाजिक समरता और पारिवारिक स्नेह के गठबंधन को मजबूती के साथ बनाए रखने के लिए सचेत रहती है. दरअसल कहानीकार डा. पालरिया तोडने में नहीं, जोडने में विश्वास करते हैं और इसी बात को केंद्र में रखकर वे किसी भी पात्र के अहम को हावी नहीं होने देते. यही कारण है कि कहानी अपनी गति से आगे बढ़ते हुए सकारात्मक प्रभाव छोड़ती है और सद्भाव का एक ऐसा चित्रांकन कर जाती है, जो सभी पात्रों को माला के मोती जैसा वापस पिरोने में सफल हो जाता है. भले ही इसके लिए बच्चों का प्रेम ही सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हो. कहानी में अपने पोतों के प्रति दादी का प्रेम और पोतों का भोलापन एवं स्नेह की ऐसी संवेदनाएं पिराई गई हैं कि पाठक को लगता है कि इससे बेहतर समाधान कहानी में हो ही नहीं सकता था. वे दादी अर्थात स्नेहा भाभी जी के मन की संवेदनाओं को उकेरते हुए कहानी में उनके पोतों के स्कूल का चित्रण करते हैं और उनकी बातचीत में मन का सारा कलुश धो डालते हैं. कहा भी गया है कि बालमन की कोमलता और उनके प्रति लाड-प्यार ही घर की बगिया के लिए खाद-पानी का काम करते हैं. कहानीकार डा. पालरिया कहानी के अंत में स्नेहा भाभी की करुणा को प्रकट भी करते हैं-''शेखर ने अपना फोन देखा तो स्नेहा भाभी जी ने भी झुकते हुए फोन पर दृष्टि गड़ा दी. और जब दोनों ने मिलकर यह वीडियो देखा तो वे सचमुच एक बार फिर रो दी थीं. परंतु इस बार भी ये आंसू खुशी के थे, केवल खुशी के लिए. डबडबाई आंखों से उन्होंने मुझे देखा था और आंखों ही आंखों में कृतज्ञता प्रकट की थी, इस नायाब तोहफे के लिए.''3

डा. अखिलेश पालरिया की कहानियों का फलक बहुत विस्तृत है. उनकी सोच का दायरा जितरा विशाल है, उनकी कल्पनाओं का संसार उससे

हजार गुणा अधिक बड़ा है. वे ऐसी-ऐसी कल्पना कर उठते हैं जो आज के इस बाजारवादी युग में किसी स्वप्न की भांति प्रतीत होती है. असंभव-सी जान पड़ती है लेकिन पाठक अगर थोड़े-से धैर्य के साथ, थोड़ी-सी समझ के साथ विचार करे कि अगर यह कल्पना वास्तव में सच साबित हो जाए, तो हमारा यह भारत देश ही नहीं, बल्कि कहना चाहिए यह सारी दुनिया ही कितनी खूबसूरत हो जाए. डा. पालरिया ने अपनी सकारात्मक सोच और मानवीय दृष्टिकोण के चलते समाज के प्रत्येक वर्ग को अपनी कहानियों में उतारने का प्रयास किया है. भिखारियों को लेकर हिंदी साहित्य में सैकड़ों कहानियां और उपन्यास रचे गए हैं लेकिन जिस तरह की संवेदनाएं डा. पालरिया अपनी कहानी 'भिखारी' में व्यक्त करते हैं, और संवेदनाओं के जिस प्रवाह को अपनी लेखनी के माध्यम से प्रवाहित करते हैं, वह अन्यत्र बेहद दुर्लभ है. कहानी में मंदिर के बाहर बैठकर भीख मांगने वाले उम्मेद की सोच कई बार कहानी में प्रकट होती है. भीख मांगकर अपना पेट भरने वाला भिखारी भी देश के बारे में गंभीर चिंतन की छाप छोड़ता है. उसे भी अपने देश की चिंता होती है. वह आरक्षण के बारे में भी विचार करता है और गिरते राजनीतिक चरित्र को लेकर भी परेशान होता है. उसे देश की बढ़ती आबादी की भी चिंता है तो कम होते जा रहे अनाज को लेकर भी उसकी चिंताएं प्रकटती हैं. इसी प्रकार जब देश में आरक्षण के कारण दंगा हो जाता है तो वह सोचता है-

"भिखारी की समस्या भूख है, इसलिए उसकी जाति रोटी है, केवल रोटी. उसने आज के संदर्भ में, जब जातिगत वैमनस्य बढ़ता जा रहा था, अपने बापू को नमन किया. उसने सोचा- इन नवयुवकों से तो हम भिखारी ही अच्छे, जो देश के लिए कलंक तो नहीं हैं."4

यही नहीं, सामान्यतः रोटी, मूंगफली अथवा खाने की कोई अन्य वस्तु देकर भिखारियों पर उपकार करने वालों से रोज बावस्ता होने वाले उम्मेद को जब एक अंग्रेज जोड़ा बहुत शानदार होटल में ले जाकर टेबल पर अपने साथ बैठा कर भोजन करवाता है तो उसकी संवेदनाओं का ज्वार देखते ही बनता है. जिस तरह सडक् पर भीख के लिए लोगों की फटकार झेलने वाला उम्मेद कभी यह कल्पना नहीं कर सकता कि कोई बड़ा आदमी उसे इस प्रकार शानदार होटल में अपने और अपनी पत्नी के साथ बैठाकर भोजन करवा सकता है, उसी तरह कहानी का पाठक भी इस बात को बहुत मुश्किल से हजम कर पाता है. परंतु यह एक दयावान, संवेदनशील मन ही सोच सकता है, इस बात को ध्यान में रखते ही पाठक भी भावुक हो उठता है. उसकी नजर में कहानीकार के प्रति सम्मान कई गुणा अधिक बढ़ जाता है.

भिखारियों की संवेदनाओं को कागज पर उतारने वाले डा. अखिलेश पालरिया ने प्रेम भरे रिश्तों के बाद जिस वर्ग पर अपनी कलम सबसे ज्यादा चलाई है, वह वर्ग है बुजुर्ग लोग. अपनों को खो चुके अथवा उनके जीते-जी खुद के स्वार्थों के लिए अंधे होकर अपने जन्मदाताओं को दर-दर की ठोकरें खाने को विवश कर देने वाली औलाद की अच्छी खबर वे अपनी कहानियों में लेते हैं। बुजुर्गों का दर्द डा. पालरिया की अनेक कहानियों में मुखर होकर प्रकट हुआ है. लगता है जैसे उस दर्द को डा. पालरिया अपने भीतर जी रहे हैं.

डा. अखिलेश पालरिया की कहानियों में उपेक्षित बुजुर्गों का यह दर्द बहुत शिद्दत से उभर कर सामने आया है. जो माता-पिता अपने बच्चों के लिए अपना जीवन तक दांव पर लगा देते हैं, अपनी तमाम उम्र की कमाई बच्चों के नाम कर देते हैं, वही बच्चे जब विवाह के बाद अपनी पत्नी और बच्चों के लिए अलग दुनिया बसा लेते हैं और बुढ़ापे में एक-दूसरे का सहारा बने बुजुर्ग दम्पती में से एक जब बीमार होता है तो अकेले में उनकी क्या हालत होती है, इस बात को डा. पालरिया बहुत गहराई से महसूस करते हैं. एक चिकित्सक होने के नाते और सरकारी चिकित्सालय में लगभग चालीस वर्ष नौकरी करने के दौरान समाज के ऐसे किरदारों से डा. पालरिया का वास्ता पड़ता ही रहा होगा. निसंदेह ये संवेदनशील पल कहीं न कहीं उनके कोमल हृदय में कहानी का बीजारोपण भी करते रहे होंगे और समय के साथ उनसे जुड़ी संवेदनाएं शब्द रूप धारण करके कहानी का आकार पाते गए होंगे. डा. पालरिया की बहुत सारी कहानियों में उपेक्षित बुजुर्गों का दर्द सामने आता है. ऐसी ही एक कहानी है-'अपने पराए'. कहानी की संवेदना इतनी प्रबल है कि कई बार पाठकों

की आंखों को नम कर जाती है। कहानी में एक दृष्य है-''वह जानती थी कि जिस एम्बुलेंस में वह प्रवीण को लेकर जा रही थी, वह उसके प्रवीण को जीवन नहीं दिला सकती. उसे पता था, प्रवीण के हृदय में रक्त का संचार होता तो वे जरूर उससे कुछ न कुछ कहते. उसने एकटक प्रवीण की ओर देखा. उसे लगा, मानो वे कह रहे हों-प्रज्ञा, मैं तुम्हारा और साथ नहीं दे पाया, माफ कर दो. लेकिन तुम सदा खुश रहना.''5 संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का यह सैलाब यहीं समाप्त नहीं हो जाता. इस लंबी कहानी में उन पलों को याद करते हैं जब इस दम्पती ने अपने जुड़वां बेटों के लिए क्या-क्या दुख सहे थे. परंतु दोनों ही पुत्रों ने अपने पैरों पर खड़ा होने के बाद न सिर्फ अपने-अपने घर बसा लिये अपितु उन दुखों को पूरी तरह बिसरा दिया. ऐसे में उनका विचलित मन जब चारों तरफ से निराश हो चुका होता है और उस बुजुर्ग जोड़े का एक साथी भी सांसारिक यात्रा पूरी कर दूसरी दुनिया की यात्रा पर निकल चुका होता है, तब कल्पनाओं से परे एक सुंदर संसार की ओर कहानी पाठक को ले जाती है. वे कहानी को ऐसा मोड़ देते हैं जिसकी कल्पना को पाठक आसानी से नहीं पकड़ पाता है. अब तक प्रज्ञा ने अपनों को पराया होता हुआ ही देखा था, लेकिन अब कहानी वहां पहुंचती है, जहां पराए भी अपने प्रतीत होने लगते हैं. कहानी का अंत इतना सुखद और भावपूर्ण है कि पाठक भाव विभोर हुए बिना नहीं रहता-

''प्रज्ञा देवी ने नव्या के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा-तुम अब किराएदार नहीं, मेरे बच्चों की हैसीयत से यहां रह सकते हो। मेरे जुड़वा बेटे, जिनसे मेरा अब कोई वास्ता नहीं, के बंद कमरे कब से शायद तुम्हारी राह देख रहे हैं।''6

कहानीकार डा. अखिलेश फकत कहानियां रचते ही नहीं हैं, वे इनके साथ एक रिश्ता कायम करके चलते हैं. यह भी उनके संवेदनशील मन की ही बात है कि वे सभी कहानियों को अपनी बेटी के समान सम्मान देते हैं. जो व्यक्ति कहानी को भी अपनी बेटी मानता है, उसके हृदय में कहानी के प्रति कितना सम्मान होगा, इसका सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है. यूं कहने को तो सभी कहते हैं कि रचना लेखक की संतान की तरह होती है लेकिन कितने साहित्यकार हैं, जो सचमुच रचना को अपनी संतान की तरह प्यार करते हैं! डा. पालरिया अपनी कहानियों को अपनी बेटी की तरह की प्यार करते हैं। बिल्कुल वैसे ही जैसे वे अपनी एकमात्र बेटी के साथ खेलते, हंसते, मुस्कुराते हैं, ठीक वैसे ही वे पुस्तकों में बंद अथवा कागजों पर उतरी अपनी कहानियों को सांस लेते हुए, शरारत करते हुए, उनके मन के कोमल भावों को सहलाते हुए महसूस करते हैं. इसलिए तो एक जगह डा. पालरिया स्वयं लिखते हैं-''भीतर की व्यथा जब शब्दों में ढलकर कहानी बनती है तो वह अपनी ही बेटी का रूप ले लेती है और बेटी तो फिर हमेशा सुकून की गारंटी होती है. जितनी कहानियां, उतनी बेटियां! और हर कहानी बेटी बनकर मन के घावों पर मरहम का काम करती है।'' 7

कहानीकार डा. अखिलेश पालरिया की कहानियों में आदर्श केवल दिखावे का या कोरी लफ्फाजी नहीं है, बल्कि वे समाज को ऐसा रूप देना चाहते हैं. वे जानते हैं कि हकीकत में इस समाज को बदलना बहुत मुश्किल है, इसलिए वे अपनी कहानियों के माध्यम से अपने सपनों के आदर्श समाज की स्थापना करना चाहते हैं. अपनी इस सोच में वे कितने सफल हो पाएंगे, हो पाएंगे या नहीं, यह तो समय बताएगा लेकिन यह तय है कि आज के इस क्रूरतम यथार्थ वाले युग की डरावनी कहानियों के दौर में डा. पालरिया की सुंदर और संवेदनशील आदर्शवादी कहानियां मन को बहुत सुकून देती हैं।

संदर्भ ग्रंथः

1. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी प्यार का सागर, डस्टबिन एवं अन्य कहानियां, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, संस्करण-2018, पृष्ठ- 80—81

2. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी आखिर मन ही तो है, आखिर मन ही तो है, परिदृश्य प्रकाशन, मुंबई, संस्करण 2015, पृष्ठ-68

3. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी आखिर मन ही तो है, आखिर मन ही तो है, परिदृष्य प्रकाशन, मुंबई, संस्करण 2015, पृष्ठ-70

4. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी भिखारी, पुजारिन एवं अन्य कहानियां, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, संस्करण-2019, पृष्ठ- 54—55

5. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी अपने पराए, आखिर मन ही तो है, परिदृष्य प्रकाशन, मुंबई, संस्करण 2015, पृष्ठ-47

6. डा. अखिलेश पालरिया, कहानी अपने पराए, आखिर मन ही तो है, परिदृष्य प्रकाषन, मुंबई, संस्करण 2015, पृष्ठ-51

७. डा. अखिलेश पालरिया, डस्टबिन एवं अन्य कहानियां, हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर, संस्करण- 2018, पृष्ठ—7

आधुनिक काव्य की बढ़ती गद्यात्मकता-कुछ विचार

-डा. वरुण कुमार
निदेशक, केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली

मृदु मंद मंद मंथर मंथर
लघु तरणि हंसिनी-सी सुंदर
तिर रही खोल पालों के पर (पंत)

शहर के पेशाब घरों और अन्य लोकप्रिय जगहों में/उन गुमशुदा लोगों की तलाश के/पोस्टर/अब भी चिपके दिखते हैं /जो कई बरस पहले दस ग्यारह साल की उम्र में बिना बताए घरों से निकले थे/पोस्टरों के अनुसार उनका कद मँझोला है/रंग गोरा नहीं गेहुआँ या साँवला है/हवाई चप्पल पहने है/ चेहरे पर किसी चोट का निशान है/और उनकी माँएँ उनके बगैर रोती रहती हैं / पोस्टरों के अंत में यह भी आश्वासन रहता है/ कि लापता की खबर देनेवाले को दिया जाएगा/यथासंभव उचित इनाम. (मंगलेश डबराल)

प्रथम उद्धरण कविता की छंदबद्धता, लयात्मकता, संगीतात्मकता का सुन्दर उदाहरण है. आज जबकि कविता का रूप निरंतर गद्य जैसा होता जा रहा है और कविता और गद्य के बीच की सीमारेखा निरंतर धुंधली होती जा रही है यह समयानुकूल होगा कि हम इन दोनों की मूल प्रकृति पर विचार करें और पुनः उनके विधागत अंतर को परिभाषित करने का प्रयास करें.

एक पाठक की कविता की पहचान सामान्यतः जिस चीज से शुरू होती है वह है छंद. छंद में बंधी रचना कविता होती है ऐसी समझ हमें बचपन से ही प्राप्त होती है. किसी भी भाषा में पहले पद्य रचना छंद में ही होती है. गद्य के साथ उसके अंतर को प्रथमतया छंद के आधार पर ही परिभाषित किया जाता है. छंद से मुक्त कविता आधुनिक युग की देन है. छंद से मुक्ति एक बहुत बड़ी आवश्यकता थी, जिसे हिंदी कविता में पहले पहल निराला ने शुरू किया और अपने समय का प्रचंड विरोध झेला. छंद से शब्द चयन की स्वतंत्रता बाधित हो रही थी, अर्थ की अनुकूलता के ऊपर छंद की अनुकूलता को तरजीह देनी पड़ती थी. छंद मूलतः संरचना है, पैटर्न है, ढाँचा है. छंदोबद्ध कविता में संरचना की मांग ही इतनी प्रबल हो जाती है कि कभी-कभी कवि को उसका मूल्य कथ्य की गुणवत्ता से चुकाना पड़ता है.

ऊपर पंत की 'नौका विहार' के उद्धरण में जो सौन्दर्य है उसके लिए उत्तरदायी हैं उसका छंद जो नदी की मंद धारा में बहती नौका की लय का अनुकरण करता है. लयात्मकता संगीतात्मकता आदि को हम कविता के गुणों के रूप में ही देखते हैं. किंतु यही विशेषता उसे बोलचाल की सामान्य लय से दूर ले जाती है. लोकोक्तियों का प्रभाव बहुत कुछ उनकी संरचना के कारण भी है - 1. नीम हकीम खतरे जान 2. नीम हकीम से जान का खतरा होता है.

दोनों कथन एक ही बात कहते हैं लेकिन जहाँ पहला बराबर वजन की दो समानान्तर संरचनाओं (नीम हकीम और खतरे जान दोनों में ७-७ मात्राएँ) और अनुप्रास की नियमितता के कारण चुटीला और विशिष्ट एवं काव्यात्मक बन जाता है वहीं दूसरा महज एक सामान्य कथन बनकर रह जाता है. दूसरा कथन केवल एक प्रेक्षण भर प्रतीत होता है पहला कथन उससे आगे बढ़कर अवधारणा की तरह. छंद से मुक्ति का अर्थ लय से मुक्ति नहीं है. निराला की कविताएँ छंदमुक्त भले ही हों, लय से रहित नहीं हैं. निम्न पंक्तियों को देखें -

वह तोड़ती पत्थर/ मैंने उसे देखा
इलाहाबाद के पथ पर

दूसरी पंक्ति पहली की अपेक्षा बहुत लम्बी होकर भी पहली के पैटर्न का ही विस्तार है.

शहर के लोकप्रिय जगहों में उन गुमशुदा लोगों की तलाश के पोस्टर अब भी चिपके दिखते हैं जो कई बरस पहले दस ग्यारह साल की उम्र में बिना बताए घरों से निकले थे. पोस्टरों के अनुसार उनका कद मँझोला है, रंग गोरा नहीं गेहुआँ या साँवला है, हवाई चप्पल पहने है. पोस्टरों के अंत में आश्वासन रहता है.

यह किसी वर्णन का अंश प्रतीत होता है जिसमें 'काव्यात्मक' कहने लायक कुछ है तो सिर्फ अंतिम पंक्ति जिसका विपर्यय सीधा करके अगर 'खबर देने वाले को उचित इनाम दिया जाएगा' कर दिया जाए तो फिर इसके कविता होने की कोई प्रतीति नहीं रह जाती. उद्धृत अंश के बाद बाकी अंश इस प्रकार हैं -

तब भी वे किसी की पहचान में नहीं आते/पोस्टरों में छपी धुधली तस्वीरों से/उनका हुलिया नही मिलता/उनकी

शुरुआती उदासी पर/अब तकलीफें झेलने की ताब है/शहर के मौसम के हिसाब से बदलते गए हैं उनके चेहरेकम खाते कम सोते कम बोलते/लगातार अपने पते बदलते/ सरल और कठिन दिनों को एक जैसा बिताते/अब वे एक दूसरी ही दुनियाँ में हैं/कुछ कुतूहल के साथ/अपनी गुमशुदगी के पोस्टर देखते हुए/जिन्हें उनके परेशान माता पिता जब तब छपवाते रहते हैं/ जिनमें अब भी दस या बारह लिखी होती है उनकी उम्र।

'गुमशुदा लोग' जैसा कि शीर्षक से ही प्रतीत होता है, एक प्रतीक के रूप में आया है. अपने अतीत से, स्मृतियों से, मानवीय संबंधों से दूर जा चुके व्यक्ति का जो धीरे धीरे इतना बदल चुका है कि अपने खो जाने को भी भूल चुका है. उसके जो लक्षण गिनाए गए हैं: हुलिया नहीं मिलना, मौसम के हिसाब से चेहरे बदलना, लगातार अपने पते बदलना, एक दूसरी ही दुनियाँ में होना, कुतूहल के साथ अपनी गुमशुदगी के पोस्टर देखना आदि उसके विस्मरण और 'गुमशुदगी' को अच्छी तरह परिभाषित कर देते हैं.

लयात्मक प्रकृति के गद्य का आत्यंतिक उदाहरण हैं राजा राधिकारमण सिंह की कहानियाँ जिनकी सबसे बड़ी विशेषता उनकी समानांतरता, तुक और अनुप्रास ही हैं।

१. उपवन में फूल खिलते हैं, वन में विहँसते हैं।

२. तो उस ताज के तले मुँहताज की तायदाद तरक्की पर होगी(दरिद्रनारायण)

एक अन्य उदाहरण देखें -

वे भारी भरकम पोथे, कबिरा जाने कितने थोथे. ये धरम करम के पथ सारे, मल कीचड़ के ही गलियारे. ये ऊँच नीच की अनंत कजियारी रातें। ये राव रंक के जाले, सरासर झूठे और काले। (दूजौ कबीर, विजयदान देथा)

कहावतें प्रायः किसी स्थिति पर व्यंग्य या आलोचनात्क टिप्पणी होती हैं.

कविता की प्रकृति नियमितता की है उसमें अगर अनियमितता आती है तो किसी विशेष प्रभाव की सृष्टि के लिए. इसके विपरीत गद्य की प्रकृति अनियमितता की है उसमें अगर नियमितता आती है तो विशेष प्रभाव के लिए.

कई बार कथ्य ही इतना प्रबल होता है कि उसी से एक आंतरिक लय निर्मित हो जाती है -एक नीला दरिया बरस रहा (16 मात्राएँ)

मगर किस कदर ऊबड़-खाबड़ (16 मात्राएँ) (शमशेर बहादुर सिंह)

इसमें सभी पंक्तियाँ अलग अलग प्रकार के व्याकरणिक वाक्य हैं, हालाँकि मात्राओं की एक नियमितता उनमें है लेकिन इसका सबसे उल्लेखनीय तत्व एक के बाद आनेवाले अनोखे अप्रत्याशित बिम्ब हैं, जो भाषाई विचलन का सहारा लेकर प्रकट हुए हैं. 'नीला दरिया बरस रहा' में स्थिर के लिए गतिशील क्रिया (बरसना) का प्रयोग, हवाएँ जिनका कोई आयाम नहीं उसके लिए ठोस आयाम वाले विशेषण 'चैड़ाई' का प्रयोग और मानव निर्मित (मकान) की प्रकृतिनिर्मित (जंगल) के रूप में कल्पना. लय के लिए एक और तत्व जिम्मेदार हो सकता है-अव्यवस्था में व्यवस्था आरोपित करने का प्रयास.

गद्य में जब कोई बात कही जाती है तो उसके संदर्भों को परिभाषित करना आवश्यक होता है. गालिब का शे'र 'दिले नादाँ तुझे हुआ क्या है, आखिर इस दर्द की दवा क्या है' अगर किसी गद्य की विधा में आता तो यह स्पष्ट करना अनिवार्य होता कि किसने किससे और किस संदर्भ में में ये बात कही. यही नहीं, किस प्रकार के दर्द की बात कही जा रही है यह भी स्पष्ट करना आवश्यक होता.

गद्य में ऐसी स्थिति तब आती है जब कोई उक्ति इतनी प्रसिद्ध हो जाए कि वह कहावत का-सा रूप धारण कर ले, जैसे प्रेमचंद के पंच परमेश्वर की ये पंक्तियाँ -'बेटा, क्या बिगाड़ के डर से ईमान की बात नहीं बोलोगे?'

दोनों उदाहरणों में संप्रेषण व्यापार की स्थितियों के अंतर को हम निम्न आरेख से व्यक्त कर सकते हैं -

आज कविता छंद, लय आदि को छोड़कर चाहे कितनी ही गद्यवत हो चुकी हो, संदर्भ की उक्त स्वतंत्रता का लाभ वह अवश्य उठा रही है.

अर्थ की बहुस्तरीयता पर कविता का एकाधिकार हो ऐसा नहीं है. गद्य की रचनाएँ भी प्रतीकात्मक या उससे भी आगे रूपकात्मक हो सकती है. जार्ज आर्वेल का प्रसिद्ध उपन्यास 'एनिमल फार्म' रूपक का उत्कृष्ट उदाहरण है. अतएव, एक अलंकार का सहारा लेकर कहें तो, गद्य और कविता विधागत अंतर के बावजूद एक दूसरे के घर में आवाजाही करते हैं. अभिव्यक्ति के हर उपादान, छंद, लय, नियमित विन्यास, अनियमित विन्यास का अपना महत्व है. इसे समझने की आवश्यकता है. आज जब कवि उत्साह में आकर एक फैशन के रूप में छंद की या उसके उपादानों की उपेक्षा करता है तब कई बार वह अभिव्यक्ति के सशक्त औजारों का या तो मूल्य नहीं समझ रहा होता है या उसमें चैंकाने की प्रवृत्ति काम कर रही होती है.

लेकिन दूसरी तरफ, चर्चा को संतुलित करते हुए, इस तथ्य का उल्लेख भी आवश्यक है कि केवल छंद या नियमित लय में बांध देने मात्र से ही कोई

अभिव्यक्ति कविता की हैसियत अख्तियार नहीं कर लेती, वह पद्य की संज्ञा पा लेने की अर्हता भले प्राप्त कर लेती हो। प्राचीनकाल में साहित्येतर विषय भी छंद में बांध कर कहे जाते थे। आयुर्वेद भी पद्य में है और सारे उपनिषद् पुराण भी पद्यबद्ध हैं. आज कविता ने ऐसे दायित्व गद्य को हस्तांतरित कर दिए हैं. रचनात्मक अभिव्यक्ति के अंतर्गत भी अगर कविता के पास मूल्यवान कहने के लिए कुछ नहीं है तो छंद लय आदि उसको कोई सहारा नहीं दे सकते. किसी भी अभिव्यक्ति के लिए अर्थ का स्तर सबसे महत्वपूर्ण है. वही अभिव्यक्ति को मूल्य प्रदान करता है.

धड़कन धड़कन धड़कन-
दाईं, बाईं, कौन आँख की फड़कन-
मीठी कड़वी तीखी सीठी
कसक किरकिरी किन आँखों की तड़कन?
ऊँह! कुछ नहीं, नशे के झोंके से में
स्मृति के शीशे की तड़कन।

(अज्ञेय)

इसमें लय भी है और तुक अनुप्रास शब्दालंकार भी, भाषाशास्त्र की शब्दावली मे कहें तो इसमें विन्यास की नियमितता और स्वनिमिक आवृत्ति (अनुप्रास, एवं तुक) दोनों हैं लेकिन ये चीजें इसका मूल्य नहीं बढ़ातीं। उल्टे लगता है कवि बस तुक मिलाने के लिए शब्दों की बाजीगरी कर रहा है। अज्ञेय की उत्तरकालीन कृतियों में यह दोष अधिक है। इस मामले मे पंत और बड़े उदाहरण बनेंगे जिनकी उत्तरकालीन कविताओं में छंद, लय आदि सब हैं मगर कथ्य के नाम पर पुरानी बासी भावों की आवृत्ति है या समकालीन समस्याओं का सिर्फ विचार के रूप में उथला अनुभवरिक्त प्रत्यक्षीकरण। कई बार कवि नितांत सतही कथ्य को ही छंद, लय अलंकारों आदि में लपेटकर विशेष दिखाने की कोशिश करता है। यह दोष प्रायः मंचीय कवियों में अधिक होता है।

निष्कर्षः गद्य और पद्य का अंतर अभिव्यक्ति के प्रकार (उवकम वि चमतबमचजपवद) का अंतर है - दोनों अभिव्यक्ति की अलग अलग विधाएँ है। छंद और लय, उसमें भी विशेषकर लय वह गुण है जो कविता को गद्य से अलग करता हैः कविता की लय नियमित होती है और गद्य की अनियमित। लय प्रतिफलित होता है नियमितता और आवृत्ति के द्वारा। विभिन्न स्तरों पर आवृत्ति, जैसेः स्वनिमिक स्तर पर वर्णों की आवृत्ति (तुक और अनुप्रास), रूपिमिक स्तर पर शब्दों की आवृत्ति (यमक, ध्वन्यर्थ व्यंजना, वदवउंजवचवमपं, द्वित्व) व्याकरणिक स्तर पर संरचनात्मक इकाइयों की आवृत्ति (एक जैसे पदबंधों, उपवाक्यों, वाक्यों का आना, समानांतरता) आदि कथन में नियमितता लाती हैं और अभिव्यक्ति को काव्यात्मक बनाती हैं। ये काव्यात्मक उपादान हैं जिनकी मौजूदगी कथन को विशिष्टता प्रदान करती है। समग्र अर्थ के निर्माण में इनका योगदान होता है। ये अभिव्यक्ति के संसाधनों में शामिल हैं जिनका उपयोग कविता में अभीष्ट प्रभाव की सिद्धि के लिए किया जाता है। एक कुशल कवि अभिव्यक्ति के इन साधनों का अपनी कविता में जैसी जरूरत हो, उपयोग करता है। बिल्कुल सादी भाषा में, बिना अलंकारों के -'जिस तरह हम बोलते हैं उस तरह तू लिख' - में ऊँची कविता की जा सकती है और 'उसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख' की शर्त पूरी की जा सकती है।

आज हिन्दी या किसी भी भाषा क आधुनिक काव्य का मूल्यवान अंश छंदहीन ही है। किंतु अगर हम लय का बहुत उदार अर्थ में प्रयोग न करके प्रचलित अर्थ 'नियमित या सममितिपूर्ण आवृत्ति' ही लें तो आज की कविता बहुत कुछ लय का भी त्याग कर चुकी है। आज कविता के नाम पर सीधे सीधे गद्य भी लिखा जा रहा है। यह प्रवृत्ति अपेक्षाकृत नई है। मुक्तिबोध, धूमिल जैसे 'अब पुराने हो चुके' कवियों का अधिकांश कृतित्व छंदहीन ही है किंतु उनकी कविताओं में एक प्रकार का लय है, जो छंद की लय-सी नियमित नहीं लेकिन उसके स्रोत अर्थ और संरचना में किसी प्रकार की नियमितता, सममिति या विचलन में हैं। मुक्तिबोध की टूटी वाक्य श्रृंखला, विश्रृंखल बिम्ब योजना और फैंटेसीपूर्ण भयावह जगत उसे सामान्य अनुभव और बोलचाल की भाषा के धरातल से उठाकर उसे एकदम दूसरे तल पर ले जाते हैं। उनमें अनेक संदर्भगत तत्वों का त्याग कर दिया गया है जैसा कि कविता करती है जिनका होना किसी गद्यकृति के लिए आवश्यक होता। अगर उसकी तुलना किसी गद्यकृति से करें तो फैंटेसीपूर्ण भयावह जगत, उदाहरण के लिए, जार्ज आर्वेल ने १९८४ (या फिर एनिमल फहर्म में भी) रचा है लेकिन वह जगत तार्किक संगति से परिपूर्ण है जिसके सभी अंग सुगठित हैं, जिसमें पात्र हैं घटनाएँ हैं, विचार हैं -- सबकुछ इस हद तक, और आंतरिक संगति से पूर्ण कि वही पूर्णता उसमें भयानक विसंगति का संचार करती है। अहर्वेल "अहल मेन आर ईक्वल बट सम मेन आर मोर ईक्वल" भाषाई विचलन से अहर्वेल विद्रूप और व्यंग्य रचते हैं और मुक्तिबोध मोहभंग या

फिर विद्रूप (चाँद का मुँह टेढ़ा है)। आर्वेल का संसार विलक्षण बौद्धिक समझ और व्यंग्य से प्रसूत है जबकि मुक्तिबोध का जगत सिर्फ भयानक कल्पना से निर्मित जिसमें भय के कारणों का उल्लेख या संकेत नहीं। फैंटेसी और भय (ि‍वततवत) दोनों ही में हैं। मुक्तिबोध का जगत अपने खंडित बिम्बों और विसंगतियों से चकित करता है और आर्वेल का जगत पात्रों घटनाओं विचारों की आश्चर्यजनक संगति से एक दर्शन, एक शासन व्यवस्था की अमानवीय विसंगति का आतंक रचता है। एक कविता है और एक गद्य।

आज की कविता का प्रतिनिधि चेहरा गद्य का है। उसने अलंकरण, लयात्मकता आदि का त्याग कर सपाटबयानी और सीधे साक्षात्कार को अपना मूलाधार बनाया है। उसमें सीधे गद्य के फहर्म में बोली जानेवाली भाषा का अनुकरण करने की कोशिश है। यह सुरक्षित रूप से कहा जा सकता है कि बोलचाल की लय अपनाने की चेष्टा फहर्म के स्तर पर समकालीन कविता की सबसे प्रबल प्रवृत्ति है। किंतु इस प्रवृत्ति का दूसरा पक्ष यह है कि बोलचाल की भाषा विवरणात्मक होती है, उसमें चीजों को पूर्णता में कहने की जरूरत होती है, व्याकरणिक विन्यासों को पूरा करना पड़ता है, जबकि कविता इस बाध्यता से काफी हद तक मुक्त होती है। गद्य का फहर्म विस्तार मांगता है ; आश्चर्य नहीं कि आज की कविता में भी विस्तार से कहने की प्रवृत्ति है। यह विस्तार अक्सर उसमें अर्थ के स्तर पर मामूली तत्वों के समावेश के कारण आता है। अक्सर यह खतरा होता है कि साधारण भाषा में साधारण अनुभव या सोच ही सामने आ पाए, यद्यपि ऐसा होना आवश्यक नहीं । कवि की तो चेष्टा एक अर्थ में शब्दों की साधारणता के प्रति विद्रोह होती है: कैसे वह 'यूनीक' अनुभवों को एक 'कहृमन' भाषा में व्यक्त करे। किसी समय दार्शनिक रही यह समस्या आज के समय में संकट का रूप धारण कर चुकी है जब मीडिया बाजार आदि के विभिन्न बाहरी दबावों के कारण शब्द अवमूल्यित होते जा रहे हैं। आज कवि से और गहरी कोशिश की अपेक्षा है।

प्राचीन और मध्यकाल में कविता का फहर्म छंदबद्ध, स्थिर था। छंद और काफी हद तक लय से स्वतंत्रता ने आज की कविता में फहर्म के स्तर पर भी क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। पुरानी अभिरुचि से चिपका पाठक आज कविता के साथ न्याय नहीं कर सकता। दुर्भाग्यवश हिन्दी क्षेत्र में वांछित रुचि-संस्कार सांस्कृतिक पिछड़ापन, या जिन भी कारणों से, अपेक्षा से बहुत कम हो पाया है। आज का हिन्दी समाज तो साहित्य से भी विमुख है, उसमें कविता से सम्पृक्ति की बात तो दूर है। किंतु दोष सिर्फ पाठक को देना अनुचित होगा। बदलाव के आग्रह में अति की सीमा तक बदलती जा रही हिन्दी कविता अब अपनी विधागत विशिष्टता - प्रभाव की सघनता - से भी वंचित हो रही है। उसमें गद्य की काया में मामूली अनुभवों और सपाट गद्यात्मक कथनों की बाढ़ है। ऐसा नहीं कि गद्य का मूल्य कुछ 'कम' है। एलियट ने कहा था कि एक अच्छी कविता एक अच्छा गद्य भी होती है। कविता की प्रकृति सघनता की, संक्षिप्तता की है। आज कविता के नाम पर आ रही ढेर सारी निर्मितियों को अच्छा गद्य भी नहीं कहा जा सकता। पाठक को लगता है कि जो बात गद्य में भी मामूली लगती उसको ही पंक्तियों में तोड़कर, बल्कि 'तोड़-फोड़कर' कविता की तरह लिख दिया गया है। 'तोड़-फोड़' इसलिए कि उसमें पंक्तिभंग का कोई तर्क नजर नहीं आता, और अगर तर्क हो भी तो भी मात्र उसी की बिना पर उसे कविता का दर्जा नहीं दिया जा सकता। स्वाभाविक है, वह पाठक से भी दूर होती जा रही है, क्योंकि पाठक को उसमें कविता का रस नहीं मिलता। आज कविता नए यथार्थ को व्यक्त करने के नाम पर चाहे जितनी भी गद्यवत होने की चेष्टा करे, शब्द लाघव और 'अर्थ अमित अति आखर थोरे' की अपेक्षा उससे रहेगी ही, अन्यथा वह वाचालता के आरोप से अपने को मुक्त नहीं कर सकेगी। आज हिन्दी की कितनी ही पत्र-पत्रिकाओं में छपती विपुल काव्यराशि को देखकर यही प्रतीत होता है कि आज का कवि विभिन्न काव्यात्मक उपादानों से मुक्ति की आड़ में अपने ज्ञान और कल्पना और संयोजन क्षमता की दुर्बलता को छिपाना चाहता है। किसी अनुभवप्रसूत विवेकसम्पन्न जीवनदृष्टि की जगह तात्कालिक या सतही अनुभवों से काम चलाना चाहता है। अनुभवों के पीछे के सत्य का साक्षात करने के बजाए अनुभवों के विवरण देने में सुविधा देखता है। ऐसे में आज बार-बार छपते, चर्चित होते और क्रमशः पुरस्कृत भी होते अनेक कवियों के माहौल में किंचित अफसोस के साथ पाठक यही सोचता है -

'अब मुअज्जन की सदाएँ कौन सुनता है
चीख चिल्लाहट अजानों तक पहुँचती है।'

(दुष्यंत)

स्वतंत्रता दिवस के उपलक्ष्य में:-

“स्वतंत्रता हैं लोकतंत्र”

-डॉ० अरूण कुमार आनन्द
चन्दौसी, संभल उ०प्र०

भारत की स्वतंत्रता वैसे तो विश्व प्रसिद्ध हैं, किंतु देश की वर्तमान हालात से कौन परिचित नहीं हैं? भारत में अलगांववादी का बिगुल बजरहा हैं तो आंतकवादी-नक्शलवादी लोग निर्दोष लोगों की खून की नदियां बहा रहे हैं. हजारों मांगो का सिन्दूर तिरोहित हो रहा हैं. माताओं की गोद सूनी हो रही हैं, मासूम अनाध ा होने की पीड़ा से कराह रहे हैं. अन्याचार-अनाचार भ्रष्टाचार बलात्कार की व्यथा सिर चढ़कर नाच रहा हैं, हत्या लूटपाट-साम्प्रदायिक-हिंसा का साम्ररज्य चारों ओर व्यक्त हैं, बेरोजगार रोजगार के लिए दर-दर भटक रहा हैं, खेती हर किसान आत्महत्या करने पर मजबूर हैं. देश का नागरिक अपना हक मांगता हैं तो बदले में उसे लाठियां गोलियां और दर्दनाक मौत मिलती हैं, गांधीवादी नेता गांधीवाद की धज्जियां उधेड़ने में लगे हैं. देश के पहरेदार गद्दार बन चुके हैं कुर्सी और सत्ता के भूखें जनप्रतिनीधि (भेड़िए) लक्ष्य से दिग्भ्रमित हो निहित स्वार्थ की पूर्ति हेतू अपनी तिजौरियां भरने में मस्त हैं, भगवा वेश धारी संतों का इमान चौराहे पर बिक रहा हैं. तो देश की प्रजा कहां जाए? ऐसी हैं भारत की स्वतंत्रता.

इन परिस्थितियों में स्वतंत्रता दिवस में उसकी सार्थकत पर सवाल उठना स्वभाविक ही हैं. मुख्य प्रश्न हैं कि “वह सुबह कब आएगी, जब हर घर में आजादी के दीप जलेंगे?” “भारत माता राजनीतिक परिवर्तन की खून मांग रही हैं.” भारत को आजाद हुए सात दशक हो चुके हैं, इन सात दशकों में आजादी सिर्फ पजीपतियों और राजनीतिक नेताओं को मिली हैं. देश की जनता सात दशक पहले जहां थी उससे दो दशक और पीछे पहूँच गई हैं. पहले ब्रिट्रिस साम्राज्य की गुलाम थी अब अपने ही हिन्दुस्तानियों का गुलाम हैं. जब विश्व का यह आध्यात्मिक राष्ट्र स्वतंत्र हुआ तो दो सदी पुराने अपने ‘अपना स्वराज्य’ का स्वप्न साकार होता दिख रहा था, स्वतंत्रता संग्राम के सूत्रधारों ने जो दिवास्वपन देखे थे वे सब आज आकाश में वीलिन हो गये हैं, शेष रह गई हैं स्वाधीनता की धूंधली यादें. इसके विपरित परिलक्षित हो रहा हैं एक ऐसा भारत जहां केवल भटकाओं ही भटकाओं हैं. असुरक्षित जिन्दगी के प्रतिबिम्ब में लोकतंत्र की अघोषित प्रतिबद्धता का परित्याग कर दिया गया हैं. आदमी का मुल्य पशु से भी कम हो गया हैं.

शिक्षा, स्वास्थ्य, साहित्य, अध्यात्म जैसी समाज सेवी कृत्थों का व्यवसाय में परिर्वतित कर दिया गया नित्य नए पाखण्ड़ के अवतार अवतरित हो गये. और राजनीति तन्दूर में तब्दील हो गया हैं. उसके सूत्रधारी की नैतिकता कबूतर बाजी का धंधा बन गया तो सवाल यह उठता हैं. कथा वहीं भारत की वास्तविकता स्वतंत्रता हैं अथवा परतंत्रता, कला असंख्य राष्ट्रभक्तों ने इसी स्वतंत्रता के लिए अपनी कुर्बानी दी थी.

व्यकवथ का अर्थ प्रतिवर्ष राष्ट्रीय परंपरा के अनुरूप यद्धपि हम एक नए विश्वास-संकल्प के साथ अखण्ड़ और अक्षय राष्ट्र की परिकल्पना के साथ भारत का पुर्ननिर्माण कर प्रगति के चरमोत्कर्ष पर पहूँचने का संकल्प करते हैं. बावजूद इसके स्थिति वही ढ़ाक के तीन पात वाली होती हैं तो जिन उम्मीदों आकांक्षाओ अरमानों के साथ वास्तविक स्वराज्य की प्राप्ति आवश्यक हैं. यह कैसे संभव हैं का निर्णय करना होगा. किन्तु भारत की प्रजा प्रत्येक मोर्चे पर बिखरती नजर आ रही हैं. विश्व के 72 धर्मों को पोषित एवं पल्लवित करने वाले अध्यात्मिक धर्मावादों ने दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र की वर्तमान स्थिति पर मात्र खेद् प्रगट किया हैं, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं किया. लोकतंत्र को बचाने की जो योजना अभी शेष हैं पर किसी ने विचार करना मुनासिब ही नहीं समझा? क्योंकि भारत में निजस्वार्थ पूर्ति हेतू अपनी तिजोरी भरने की नेताओं की नीति प्रवृत्ति का प्रचलन इतना व्यापक हो गया हैं कि आगे स्वतंत्रता का जजबा हाथी के मूंह में चीटी के समान बनकर रह गया हैं. इस तथ्य से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि तमाम फौजी साजो सामान के साथ गरजते

तोंपों की सलामी गारद के साथ मात्र लाल किले के प्राचीर पर तिंरगा फहरा देने से स्वतंत्रता का कत्वर्य पूर्ण नहीं होता जिसे नेता इतिश्री समझते हैं. इसकी अपेक्षा अब भारत की जनता को ही आजादी की पहल करनी होगी?

देखा जाए तो प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में राजनैतिक स्वतंत्रता इतनी हावी हैं कि स्वधीनता उसमें धूमिल होकर रह गयी हैं। जो हमेशा ऐतिहासिक संस्कृतिक स्वतंत्रता पर निर्भर करता हैं, जब कभी संस्कृति का विस्तार स्वतंत्रता में समाहित होकर आर्थिक न्याय-सामाजिक समान्ता-समता विचारों की स्वतंत्रता सृजन की संभावनाओं और भविष्य की कल्पनाओं पर कुठाराघात करने लगता हैं तो लोकतंत्र का आस्तित्व संकट में पड़ जाता हैं। वर्तमान भारत की परिस्थितियां भी इससे जुदा नहीं हैं। परिणाम स्वरूप स्वतंत्रता में विश्वनियता (विश्वास) का अभाव उत्पन्न हो जाता हैं। राष्ट्रहित की हत्या सामान्य विषय हो चुका है। जब कि राजनीति का अपराधीकरण चरम पर हैं। समाज और शासन-प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार काला बाजारी आज शिष्टाचार का रूप धारण करता जा रहा हैं, उसे कोई भी अछूता नहीं दिखता चश्मा लगाकर। अपराधिक गतिविधियों में अप्रत्यशित वृद्धि माफिया की समान्तर शासन नारी-अस्मीयता का सरे आम दोहन, हत्या लूट खशोर किसानों मजदूरों का उत्पीड़न खुफिया संस्थानों और सुरक्षा बलों की निष्कृयाएं के कारण आज भारतीय नागरिकों का जीना दुष्वार हैं, जनता आसन्न-हतप्रभ हैं। और शुन्य में अपने आप को तलाश कर रहा हैं, में स्वतंत्रता दिवस का कथा महत्व? के साथ उम्मीद हैं कि आखिर वह सुबह कमी तो आएगी? जब उसकी वास्तविक स्वतंत्रता का चिराग हर घर में रौशन होगा?

यर्थात् के धरातल पर रात चाहे कितनी भी घनेरी क्यों न हो सूर्य उदय जरूर होता हैं। इसलिए सुनहरे ख्वाबों को सजाना चाहिए। नवीन विश्वास के साथ उच्चमहत्कांक्षा-दृढ़ संकल्प और निश्चित लक्ष्य लेकर किया गया प्रत्येक प्रयास का परिणाम सुखदायी होता हैं। इसके बावजूद यह बिड़म्बना हैं कि हम चार कदम सूर्य की रौशनी में आगे बढ़ने के दो कदम पिछे लौट जाते हैं।

"ख्वाहिशों के समन्द्र में-
इतनी दूर नहीं जाना,
ख्वाहिशों के भवंर से
वापस कोई लौटा नहीं।"

इसके लिए क्या हम स्वयं जिम्मेदार नहीं हैं? भारत के नौजवान दोस्त काश, एक नई सुबह का नए अंदाज में अभिनन्दन करने का मजा हम नहीं जुटा पाते यह जानने के लिए कि अवसर के दौर में स्वतंत्रता के शुभागमन में साक्षात्कार कितना हसीन होता हैं। निःसंदेह कुछ लोगों ने यह सौभाग्य प्राप्त किया हैं। आज भी इसके लिए प्रयासरत्त हैं निश्चित रूप पर वे साधुवाद के पात्र ही हैं। वस्तुतः भारत को स्वतंत्र हुए छः दशक गुजर चुके हैं अनेक दर्दनाक हादसे और उपलब्धियां भी इसने हासिल किया हैं, संक्रमण की इस दौर में जब भारत खुलूआम राष्ट्र की आस्मिता के साथ खिलवाड़ कर रहा हैं तो इसके भविष्य को साकार और उज्जवल बनाने का दायित्व किसका हैं? स्वाधीनता समाज के अन्तिम द्वार पर दस्तक देकर वापस लौटने की तैयारी में हैं, ऐसी परिस्थिति में हमारा कर्तव्य बनता हैं कि राष्ट्र विश्व की महाशक्ति एवं अध्यात्मिक गुरू की भूमिका का हम निर्वाह करें। और प्रजातांत्रिक व्यवस्था को सशक्त कर भारत की आलोकित करें। इसके लिए हमें एक और सत्याग्रह आनदोलन का शंखनाद करना होगा। जिसके लिए हमें निःशस्त्र रणक्षेत्र में उतरना होगा? कथा भारत की प्रजा इस दिशा में सार्थक पहल करने का मजा रखती हैं, यदि हां तो फिर प्रतिक्षा किसकी? पहल आपको-हमें ही करना हैं।

समाजसेवी अन्ना हजारें 78 वर्ष की आयू में जब राजनीतिक व्यवस्था परिवर्तन का जजबा लेकर रणभूमि में उतर चूके हैं तो देश के नव जवान क्यों नही उतर सकते हैं, कथा उन्होंने हाथों में चूड़ियां पहन रखी हैं? आइए हम आप मिलकर एक सशक्त-समर्थ समृद्ध राष्ट्र का निर्माण करें, तभी हमारे देश की वास्तविक स्वतंत्रता होगी। अन्यथा अपने ही देश में हम हिन्दुस्तानियों का बंधक गुलाम बनकर रह जाएगें। केवल लाल किले के प्राचीर से तिरंगा लहराने से भारत स्वतंत्र नहीं होता हैं।

धर्म, पंथ एवं सम्प्रदाय

भारत का वैदिक धर्म ही सनातन धर्म है इसके काफी अर्से बाद पारसी, जैन, बौद्ध, यहूदी, ईसाई, इस्लाम, सिख आदि अनेक पंथों/सम्प्रदायों का उदय हुआ. इन्हे इसीलिये पंथ अथवा सम्प्रदाय कहना ज्यादा तर्क संगत व उचित माना गया कारण कि वैदिक यानि सनातन धर्म के विपरीत अन्य सभी किसी एक व्यक्ति के द्वारा प्रतिपादित किये गये है. और कटु सत्य तो यह है कि उपरोक्त सभी पंथ/सम्प्रदाय वैदिक यानी संनातन धर्म से ही उपजे है.

पारसी धर्म जरथ्रुस्त द्वारा, जैन धर्म महावीर स्वामी तथा बौद्ध धर्म गौतम बुद्ध द्वारा प्रवर्तित माना जाता है जबकि यहूंदी धर्म अब्राहम (इब्राहिम) द्वारा ईसाई धर्म ईसाह मसीह द्वारा और इस्लाम धर्म की शुरूआत हजरत मोहम्मद द्वारा किये जाने का प्रमाण मिलता है. सिख धर्म के प्रवर्तक गुरूनानक देव माने जाते है. धर्म का अर्थ सत्य व कर्तव्य ही है पर धर्म का एक अर्थ ईश्वर की पूजा आराधना भी है. यही भाव सनातन धर्म से लेकर कालांतर के अन्य धर्मो, पंथों एवं सम्प्रदायों ने भी माना है. अनेक लेखकों ने धर्म को जीवन जीने की एक शैली माना है. इसे ही इन लेखकों ने संस्कृति का नाम दिया है. मानव उत्पत्ति के बाद उसके जीवन जीने की पद्धति कला निरंतर विकसित होती रही है. पुराणकाल की बात छोड़ भी दी जाय तो भी अतीत के आर्य, द्रविड़ लोगों के जीवन जीने की शैली उनकी संस्कृति का ही दर्पण नजर आती हैं. यदि यही मान लिया जाय कि धर्म सिर्फ ईश्वर की उपासना पद्धति का नाम है तो सनातन धर्म सहित अन्य धर्मो, पंथों सम्प्रदायों की यहां चर्चा जरूरी हो जाती है.

पारसी धर्म-पारसी धर्म विश्व के अत्यंत प्राचीन धर्मो में से एक माना जाता है. इसकी स्थापना आर्यो की ईरानी शाखा के एक पैगम्बर जरथ्रुस्त ने की थी. इसके धर्मावलम्बियों को पारसी या जोराावियन कहा जाता है यह धर्म एकेश्वर वादी धर्म है. यह ईश्वर को आहुरा माज्दा कहते है. इनका धर्म ग्रंथ जेंद अवेस्ता है.

जैन धर्म- जैन धर्म में कुल २४ तीर्थंकर हुये है. इनमें महावीर बधमान अन्तिम यानी २४वें तीर्थंकर थे। ईसा पूर्व छठी शताब्दी में हुये महावीर बर्धमान ने ही जैन मार्ग का जोरदार संगठन किया था. उनसें पूर्व २३वें तीर्थकर पार्श्वनाथ थे जो वैराग और तपस्याचार्य पर जोर देते थे। यहीं जैनों का मार्ग भी था। हालांकि तब तक जैन नाम नहीं निकला था. जैन धर्म का अहिसा वाद वेदों से निकला है. इसका कारण यह है कि ऋषभ और अरिष्ट नेम जैन मार्ग के इन दो परिवर्तो का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है. जैन धर्म के पहले तीर्थंकर श्री ऋषभ देव थे.

बौद्ध धर्म-इसके प्रवर्तक गौतम बुद्ध जन्म से क्षत्रीय थे. करूणा (दया) धर्म का प्रमुख आधार रहा है. बुद्ध नास्तिक थे और वह आत्मा और परमात्मा किसी को भी नहीं मानते थे. बौद्ध धर्म का प्रार्दुभव भले ही भारत में हुआ था किन्तु कालांतर में इसका प्रचार-प्रसार विदेशों में कहीं अधिक हो गया. आज की तारीख में जहां भारत में बौद्ध धर्म नाम मात्र का रह गया है वहीं चीन, जापान, लंका, कोरिया आदि में बौद्ध धर्म काफी उन्नत पर है.

यहूदी धर्म-यहूदी धर्म की शुरूआत पैगम्बर अबराहम (इब्राहिम) से मानी जाती है जो ईसा से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व हुये थे. इनके बाद पैगम्बर मूसा को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है. सही मायने में मूसा को यहूदी धर्म का संस्थापक माना जाता है. यहूदियों के धर्मग्रंथ को तनख कहा जाता है जो इब्रानी भाषा में लिखा गया है.

इस्लाम धर्म-इस्लाम धर्म का प्रार्दुभाव भी यहूदी धर्म से माना जाता है. कहा जाता है हजरत आदम (अलैहि) से लेकर हजरत मोहम्मद (साल) तक हजारों वर्षों में कई पैगम्बर हुये इनमें से २६ के नाम तो इनके धर्म ग्रंथ कुरआन में मौजूद है. इनके अनुसार हजरत मोहम्मद साहब इस्लाम के प्रर्वतक नहीं थे बल्कि एक पैगम्बर थे.

हालांकि इस्लाम की पहचान हजरत मोहम्मद साहब से मानी जाती है. आज इस्लाम दुनिया का सबसे बड़ा धर्म माना जाता है.

सिख धर्म-सिख धर्म (पंथ के प्रर्वतक) गुरू नानक देव माने जाते है. गुरूनानक भी निराकार वादी थे. वह अवतारवाद, जातिपात और मूर्ति पूजा को नहीं मानते थे. उनके मत की विचित्रता ही कही जायेगी कि एक तरफ वह वेदांत पर आधारित है तो दूसरी तरफ में तसव्युक के रक्षा की थी. इनके धर्म ग्रंथ का नाम 'ग्रंथ साहिब'. अलावा उपरोक्त पंथों/ सम्प्रदायों के जापान में शिन्तो मत है, चीन में ताओ मत चीन में ही कन्फ्यूशियस मत के अनुयाइयों की संख्या भी कम नहीं है.

विश्व का प्राचीनतम मंदिर

दुनिया का पहला मंदिर कानपुर में स्थित ब्रह्मेश्वर मंदिर को माना जाता है. पर विश्व का प्राचीनतम मंदिर चम्पा वर्तमान में वियतनाम के पो नगर में होने का प्रमाण मिलता है. तीन संस्कृत अभिलेखों में राजा विचित्र सगर का उल्लेख है जिन्होंने द्वापर युग के 5911 वर्ष में उपरोक्त मंदिर में शिव के मुखलिंग की स्थापना की थी. 774 ई० में प्राचीन काष्ठ मंदिर विदेशी आक्रमण में जला दिया गया. वर्तमान मंदिर 817 ई० के अभिलेख के अनुसार पुनः बनया गया. राजा विचित्र सागर का उल्लेख चम्पा नरेश सत्य वर्मन के एक संस्कृति का अभिलेख शक सम्वत 706, 784 ई० विक्रांत वर्मन शक सम्वत 776, 850 ई० तथा जयवर्मन तृतीय के शक सम्वत 1065, 1143ई० के तीन अभिलेखों में हैं. यह मंदिर उत्तर से दक्षिण की ओर दो पंक्तियों में एक पहाड़ी पर स्थित है. प्रधान मंदिर वर्तमान में भी अच्छी दशा में है. कलियुग सम्वत के प्रारंभ 3102ई०पू० से 864000 वर्ष पहले प्रारंभ हुये द्वापर युग के 5911 वर्ष अर्थात 854987 ई0पू0 में राजा विचित्र सागर ने यह मंदिर स्थापित कराया. भारत में शंकाराचार्य पर्वत पर स्थित युधिष्ठरेश्वर मंदिर द्वापर युग 3102 ई०पू० से पहले का है. मिश्र देश के त्रिकोण मंदिरों का भी यहीं समय है, मैक्सिको का सोपान युक्त सूर्य मंदिर भी इसी समय का लगता है परन्तु द्वापर सम्वत के अभिलेख युक्त विश्व का प्राचीन मंदिर चम्पा वियतनाम के पो नगर में इससे बहुत पहले का है.

विश्व का सबसे बड़ा मंदिर

विश्व का सबसे बड़ा मंदिर अंगकोर वाट है जिसका अर्थ है नगर मंदिर (सिटी टैम्पल). यह उत्तर-पश्चिमी कम्पूचिया के अंगकोर शहर में स्थित है. कम्बोड़िया को पहले कम्पूचिया के नाम से जाना जाता था. इसकी बाहरी दीवार का कुल क्षेत्रफल एक दर्जन फुटबाल मैदानों के क्षेत्रफल से भी अधिक है. इस मंदिर के अंदर पत्थर के कई प्रांगण है जो अपने से बाहर वाले प्रांगणों से अधिक ऊंचे है. इसके मध्य में पत्थर के पांच स्तम्भ स्थित है जो कमल के फूल जैसे दिखते है. किसी समय इन पर सोने की परत चढ़ी हुआ करती थी. इनमें सबसे मध्य वाला स्तम्भ सर्वाधिक ऊंचा है. यह मंदिर एक बड़े पिरामिड जैसा दिखता है. बरामदें की दीवारों पर हिन्दुओं के सर्वाधिक पूजनीय देवता श्री विष्णु के दृश्य उत्कीर्णित है. यह मंदिर लगभग 1550 मीटर लम्बा और 1400मीटर चौड़ा है. पश्चिम की ओर से इस तक एक बहुत सुंदर सड़क जाती है जो एक सेतुपथ (उभरी हुई सड़क) पर बनी है. मूल रूप में इस मंदिर में 9 स्तम्भ थे परन्तु उनमें से आज सिर्फ 5 ही रह गए है.

इस मंदिर का केंद्रीय भाग ब्रह्माण्ड के केन्द्र बिदु को प्रादर्षित करता है. इसके प्रांगण में बहुत खूबसूरत स्तम्भ है. इसकी सीढ़ियां और डूयोढ़िया शानदार दस्तकारी का नमूना है. सभी कलाकृतियों में हिंदू धर्म से सम्बधित गाथाएं उत्कीर्णित की गई है. इस मंदिर में विभित्र मुद्राओं में अप्सराओं की प्रतिमांए भी मौजूद है. इस मंदिर का निर्माण खमेर राजा सूर्यवर्मन द्वितीय द्वारा 12वीं शताब्दी की शुरूआत में किया गया था. सूर्यवर्मन का शासनकाल 1113 से 1150 तक था. इस मंदिर का निर्माण सूर्यवर्मन ने अपने पूजा स्थल के तौर पर किया था. मंदिर की दीवारों पर कई ऐसे दृश्य देखने को मिलते है जिनमें सूर्यवर्मन के ऐश्वर्यशाली वैभव का चित्रण है. खमेर राजा खुद को सर्वोपरि मानते थे और लोग उनकी पूजा किया करते थे. लोगो ने उनके सम्मान और वैभव को प्रदर्शित करने वाले कई मंदिरों का निर्माण करवाया. यह मंदिर उस काल का भवन निर्माण कला का उत्कृष्ट नमूना है.

स्त्री के सन्दर्भ में धर्म की नई व्याख्या हो

-चमेली जुगरान, नई दिल्ली

ऊपरी तौर पर हर धर्म यही कहता हैं कि हर इंसान बराबर हैं यहा तक कि जीव जन्तु और पशु पक्षी भी न्याय और आदर के हकदार हैं। लेकिन वास्तविकता कुछ और हैं धर्म ने दूरियां बढ़ाई हैं घर और समाज में जो लोग ऊँचे ओहदों पर बैठे हुए हैं उनको धर्म ने ज्यादा छूट और अधिकार दिए हैं, रीति रिवाजों में उन्हीं को ज्यादा फायदा पहॅंचाया गया। धार्मिक ग्रंथ स्त्रियों को पुरूषों की तुलना में निम्न स्तर पर रखा जाता हैं।

समाज में हर क्षेत्र में जो गैर बराबरी हैं वह चीज धर्म में भी दिखती हैं युगों पुरानी धार्मिक कहानियां आज भी उदाहरण के तौर पर दुहरायी जाती हैं उन्ही के आधार पर स्त्री का चरित्र और परिश्रम आंका जाता हैं। सती सावित्री और द्रौपदी की मिसाज देकर एक कर्तव्य परायण और धर्मनिष्ठ महिला की छवि आंधी जाती हैं जिसमें जरा भी लक्ष्मण रेखा को पार किया उसे आवारा बदचलन और तेज दिमाग कहा जाता हैं। स्वयं स्त्री भी अपनी परिभाषा यही समझने लगी हैं जो स्त्री खानदान थी इज्जत रखे सास ससुर की सेवा करे पति और बच्चों का ख्याल रखे वही सफल गृहिणी हैं। परिवारिक जिम्मेदारियों को निभाना ही सर्वप्रथम कर्तव्य हैं पहले पिता फिश्र पति और बाद में पुत्र के सरंक्षण में रहना इनकी नियति हैं सास्त्र में भी यही लिखा हैं यहां तक कि ढ़ोग, गवांर, शुद्र, पशु, नारी सब ताड़न के अधिकार कहा गया हैं बचपन से ही ऐसा सुनते हुए उनके अन्दर ही भावना ग्रहण लेती हैं। अच्छी औरत परिवार के दायरे में ही सम्भव हैं लड़कियों से कहा जाता हैं ठीक से पड़ो नही तो तुम्हारी शादी कर देंगे घरों में काम करने वाली आया तथा प्रेसवासियों से बात करने पर ऐसी ही बाते सुनने को मिलती हैं उनके भार्वदों को ऐसी लड़किया नहीं मिलती। इतना सब होते हुए भी माहिलाओं के लिए ध्रर्म महत्वपूर्ण क्यों बना हुआ हैं पति पुत्र और परिवार के लिए रात भर गंगा किनारे एक टांग पर खड़ी दिया जलाएँ! आदमी चांद पर चला गया लेकिन वे आज भी चांद को देखकर व्रत तोड़ती हैं। परिवार थी सुरक्षा का जिम्मा केवल स्त्री पर ही क्यों पुरूष क्यों नहीं लेते व्रत पत्नी और सन्तान के लिए।

धार्मिक परम्पराएँ स्त्री को अर्धागिनी मानती हैं तो वो जीवन भर आधी ही बनी रहती हैं धर्मकर्म के मामले में पुरूष आगे हैं वह पुजारी हैं मंत्र पढ़ता हैं शादी ब्याह मुडंन क्रिया कर्म करवाता हैं पिण्डदान श्राद्ध तर्पण उसी के हाथों होते हैं यह अधिकार स्त्री को नहीं हैं। स्त्री घर में पति पुत्र या पुरूष रिश्ते दार न हो तो दूर के किसी सम्बन्धी को बुलाया जाता हैं ताकि मृत आत्मा को स्वर्ग व शांन्ति मिले दिलचस्प बात तो यह हैं कि स्त्रियों के सहारे ही धर्म जीवित हैं सभी आयोजनों के पीछे स्त्री शक्ति मौजूद हैं दूर्गा पूजा का समस्त आयोजन महिलाओं के हाथों में ही होता हैं चन्दा वसूलना सांस्कृतिक कार्यक्रम मंच व्यवस्था साज-सज्जा पुधांजली आदि सब वही करती हैं पुरूष आनन्द विभोर हो प्रसाद ग्रहण करते हैं।

जन्म नामकरण पाणिग्रहण आदि के लिए पूजा सामग्री मास तिथि का हिसाब भी महिलाएँ घी रखती हैं। पश्चिमी देशों में महिलाओं ने अनेक सघंर्ष किए हैं। पुरूष पादरी ही क्यों हो स्त्री क्यों नही? एक प्रकार से महिलाओं ने ईश्वर व धर्म से विशेष नाता जोड़ रखा हैं अपने सुख दुख भी बातें वे ईश्वर से करती हैं कीर्तन सत्संग के बहाने सखी सहेलियों के साथ तीरथ यात्रा पर निकल सकती हैं। इस बहाने घर परिवार से भी इजाजत मिल जाती हैं काम के लिए कोई नहीं रोकता कुछ समय के लिए चूल्हे चौके से छुट्टी मिल जाती हैं। प्रश्न उठता हैं कि इस प्रकार आजादी पाने के लिए उन्हे धर्म का सहारा क्यों लेना पढ़ता हैं धर्म ने उन्हे कमजोर बनाया और धर्म ही उनकी शक्ति भी बना।

धार्मिक कट्टरता के दौर में बन्दिसें भी उन्ही पर लगती हैं। अफगानिस्तान, ईरान में जब इज्जत को खतरा महसूस हुआ तब-तब स्त्री को दांव पर चढ़ाया गया धार्मिक परम्पराओं और संस्थानों के भीतर बदलाव आने चाहिए धर्म की नई परिभाषा स्त्री के संदर्भ में हो ताकि वो आत्म विश्वास के साथ जी सके।

बिखरे मोती

-डा० अरूण कुमार 'आनन्द'
चन्दौसी, जि०-संभल, उ०प्र०

मुन्नु को अपनी गोद में लिटाकर उसके बालों में हाथ फेरती हुई लाजो निश्चिन्त बैठी है जैसे अपने जीवन की सार्थकता पा चुकी हो। उसे अपने दाम्पत्य जीवन के खो जाने का कोई गम नहीं। पति की बहसी और शराबी प्रकृति ने उसे अधेड़ उम्र में परित्यक्ता बना दिया था। पैंतालीस वर्ष की उम्र में अब कहाँ जाय? पति ने घर से निकाल दिया, मायके में अब कोई सहारा देने को शेष न रहा। विवशता! और कुछ न सूझा तो अम्बर को चादर, धरती को बिछौना और रेलवे प्लेटफॉर्म को अपना घर बना लिया। भीड़ से भरी इस जगह में एकदम अकेली लाजो। संस्कार ने भीख माँगना नहीं सिखाया और शरीर ने कभी काम से जी नहीं चुराया। काम तलाशती और किसी तरह अपना जीवन गुजार रही थी। एक दिन बस्ती में काम से लौटते वक्त कूड़े के ढेर के पास बिलखता पाया था मुन्नु को। पूछा- 'बेटा, क्यों रो रहा हैं? घर कहाँ है तेरा? क्या नाम है 'मुन्नु' उसने कहा- माँ बाबा मुझे उसी नाम से पुकारते थे। मेरा घर, माँ बाबा सब बाढ़ में बह गया। चाचा ने अपने घर लाया, पर चाची और भैया को मैं बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। मैं मनहूस हूँ ना! इसलिए चाची ने घर से निकाल दिया। लाजो का ममत्व जाग उठा, उससे रहा नहीं गया। वह अपने साथ ले आई मुन्नु को। मुन्नु अब लाजो का खिलौना बन गया था- जीता जागता और उसे अम्मा मिल गई थी। कहता-अम्मा जब मैं बड़ा हो जाऊँगा ना, तो तुम्हें एक भी काम करने नहीं दूँगा। तुम ईंट ढोने भी मत जाना। हाथ से बाल्टी छीनता हुआ कहता- लाओ मैं पानी ला देता हूँ।' अरे बड़ा हो जाएगा तो सब करना चल अब रोटी खा ले' सहज ममत्व से लाजो कहती। सात वर्षीय की ऐसी नन्ही मुसकान ने पास उसी स्थिति में रहने वाले मंगलू को सहज ही काका बना लिया था। मंगलू-माता-पिता ने मंगलवार को जन्म लेने के कारण भले ही नाम मंगलू रख दिया हो, पर उसकी मंगल- दृष्टि ही उसके नाम को चरितार्थ करती है। सबका मंगल चाहने वाला, सबके मंगल के लिए यथासंभव प्रयासरत उसने सुखिया की जान बचाई थी। नाम तो सुखिया पर प्रकृति के प्रकोप ने उसे दुखिया बना डाला था। माता-पिता महामारी में चल बसे एवं पड़ोसी की बुदृष्टि का शिकार बनी स्टेशन आई थी रेल से कटकर जान देने। विधाता को मंजूर न था, मंगलू की दया-दृष्टि ने उसे बचा लिया। बीस वर्ष के उम्र में ही उसने जैसे जीवन भर के दुःख को सह लिया हो। वसन्त से पहले ही पतझड़ ने उसके जीवन को ठूँठ बना दिया था। अब लाजो और मंगलू ही उसके अम्मा और काका थे। इस छोटे से परिवार का आपसी प्रेम उनके जीवन के अतीत पर धीरे-धीरे परदा डालता था। सुखिया कहती-अम्मा मैं भी तुम्हारे साथ काम में चलूँगी पर काका और नन्हा मुन्नु उसकी इजाजत नहीं देते। अब घर में खाना पकाने का काम सुखिया करती, साथ-साथ आगे-पीछे मुन्नु लगा रहता- कभी जिद, कभी छेड़खानी तो कभी मस्ती। वह सदा सुखिया को चिढ़ाता-दीदी, तुम जैसी मोटी हो, वैसी मोटी-मोटी रोटी मत सेंकना। इस पर सुखिया कहती- मोटी रोटी खाओगे तो भाई मेरे जल्दी बड़े हो जाओगे। पर आज यह क्या? मुन्नु प्रत्युत्तर में कहता है- तुम झूठ बोलती हो दीदी। जहाँ अम्मा काम करने गई थी ना, वहाँ बच्चे को उसकी माँ कहती थी ''जल्दी से दूध पी लो तो जल्दी बड़े हो जाओगे।'' मुझे तुम दूध क्यों नहीं देती हो दीदी? उसके इस प्रश्न ने सबको नियत्तर कर दिया। ये ऐसे ही ऊहापोह में जिन्दगी गूजार रहे थे कि इस परिवार में एक सदस्य और आया बिन्दा। इसने गरीबी की मार सही है, लाचारी और बेकारी देखी है, भूख देखी है प्यास देखा है। बचपन में मजदूरी करने को विवश था पर थोड़ा बहुत पढ़ लिख कर समझदार हुआ तो

रात भर मंजू दीदी के विवाह का कार्यक्रम चलता रहा. सुबह मंजू दीदी की सहेलियाँ विकास से मजाक करने लगीं. वह भी मजाक करने लगी, लेकिन उसका तरीका औरों से भिन्न था. वह कभी चूँटी काटती तो कभी नाक-कान नोचती. विकास जब उब गया उसके मजाक से तो बोला-तुम तो मुझसे बहुत छोटी हो. तुम्हें मजाक नहीं करना चाहिए.

यौवन में बेकारी मिली, धिक्कार मिला। लाजो के उस छोटे से प्यार के जगत का हिस्सा बना बिन्दा अपनी कर्मठता का सहारा देता है इस परिवार को। यहाँ एक दूसरे के प्रति आत्मीयता का भाव ही उनके सुख दुःख का सहारा है। सब आपस में मिलजुल कर रहते हैं। अपना सब कुछ एक दूसरे के साथ बाँटने को तत्पर। सब दिन भर कुछ कुछ काम में लग जाते। बिन्दा स्टेशन पर कुली का काम करने में भी अब नहीं सकुचता। शाम को परिवार एकत्र होकर अपनी भावनाओं को आपस में बाँटते।

लाजो, मंगलू, सुखिया, बिन्दा और मुन्नु सभी मिलकर एक नन्ही दुनिया में जीवन बसर कर रहे थे। बाहरी दुनिया के चकाचौंध ने इन्हें तोड़ा नहीं। समाज, सरकार और बाहरी चहल-पहल के बारे में जानने की इनकी ललक एक जागरूक व्यक्ति या परिवार से कम न थी। हर सुबह इधर से अखबार वाले का गुजरना होता है और बड़े ही उत्साह से काका पूछते- भाई! बड़े लोगों की ही खबरें सुनाते हो या हम जैसों के लिए भी कुछ है? हमारे मतलब की कुछ कही जाय तो... उसके साथ ही अखबार वाले का सहज नीरस हँसी के साथ आगे निकलना इनके प्रश्नों का उत्तर दे देता। बिन्दा गरदन घुमाए उसे देखता रह जाता है। लाजो कहती है-क्यों रे बिन्दा! ये चेहरा क्यों लटका रखा है तूने? बिन्दा उत्तर देता है- कुछ नहीं अम्मा! वे चौक वाला पनवाड़ी है ना, कहता था सरकार नई बस्ती बनाएगी और गरीब, बेसहारा एवं अनाथ लोगों को वहाँ रहने को जगह मिलेगा। फिर प्लेटफॉर्म पर किसी को सोना नहीं पड़ेगा। टी०वी० वो ऐसा ही देखा था।

अगली सुबह फिर अखबार वाले का उनके सामने ठिठक पड़ना, साइकिल रोककर उस पनवाड़ी द्वारा बताए गए खबर को दोहराना उनमें एक नई आशा का संचार कर देता है उनके बुझते जीवन दीये में किसी ने तेल भर दिया हो। लाजो, सुनती हो, अरे बिन्दा तु भी सुन। आज की ताजा खबर जानती है सुखिया? अब हम लोगों के लिए सरकार 'बसेरा' बना रही है, अब हमें रहने का ठौर मिलेगा। ''हाँ-हाँ ठीक है, पर ये अखबार लो, इसमें ठिकाना देखकर अपना नाम लिखवा आना। बिना पंजीयन के घर नहीं मिलेगा'' कहते हुए उसने साइकिल मोड़ दिया।

अब क्या था। सुखिया, लाजो, मुन्नु, बिन्दा, मंगलू काका और भी आस-पास के लोग एक नई जोश से भर उठते हैं। ''जा सुखिया जल्दी रोटी सेंक ले मुन्नु लकड़ी बीनकर ले आया है और बिन्दा तु अपने साथ जरा मुन्नु को भी नहला दे'' लाजो ने कहा। हाँ अम्मा! सुनो काका को वो नीली किनारी वाली धोती पहनने को देना और ये लो दो रूपये काका से कहना दाढ़ी बनवा लें। सब झटपट तैयार होकर दफ्तर को गए, पंजीयन कराकर मानो विजय पताका पर्वत की चोटी पर लहरा दिया हो। इस उमंग में आज मेहनत की थकान गायब थी।

समय बीतता गया। सपने बुने जा रहे थे और कल्पना साकार हुई। घर के आबण्टन का समय भी आ गया। 'बसेरा' में प्रति दो व्यक्ति एक कोठरी दी जाएगी। अब समस्या आ खड़ी हुई चिंता का विषय था कौन किसे साथ रहेगा और कौन किससे अलग? मंगलू काका के दिमाग में एक उपाय सूझा। उसने लाजो से कहा- ''कैसा हो यदि हम बिन्दा और सुखिया की शादी करा दें?''

''हाँ, तुम ठीक कहते हो पर उनसे भी तो पूछ लो वो राजी हैं या नहीं?'' लाजो ने उत्तर दिया।

अब बिन्दा या सुखिया उनके प्रस्ताव को कैसे ठुकरा सकते थे। अम्मा और काका से स्नेह ने इसकी गुंजाइश ही नहीं छोड़ी थी। इनके आशीष ने सुखिया एवं बिन्दा को शादी के बंधन में बाँध दिया। 'बसेरा' में दो कोठरी अगल-बगल। एक में मुन्नु के साथ अम्मा-काका और दूसरे में वे दोनो। अब बड़ी खुशी से सब जीवन का आनन्द ले रह थे। अचानक समय ने करवट लेना प्रारंभ किया। धीरे-धीरे स्थिति में बदलाव आने लगा। अब दोनों घरों के बीच की दीवार उनके मन की दरार बन गई। हर दिन की तरह बिन्दा शाम को मुन्नु के लिए मिठाई लाता है। वे दौड़ता हुआ वह दीदी के पास जाकर कहता- दीदी, मुँह खोलो, आँखें बन्द करो। सुखिया मिठाई तो खा लेती है मगर उसे इसका स्वाद कड़वा लगता है। दोनों परिवार में खिंचवा होता हैं। लेकिन मुन्नु को इसकी क्या परवाह? वह क्या जाने मनोमालिन्य की बात। वह तो सुखिया दीदी से मसखरी करना चाहता है और भैया का दुलार, अम्मा की गोद चाहता है और काका का प्यार।

'अरे! यह क्या कर रहा है?' सुखिया के प्रश्न का उत्तर देते हुए मुन्नु ने कहा- 'कुछ नहीं दीदी, दीवार पर भैया की तस्वीर बना रहा हूँ।'' तुनक कर दीदी ने कहा- ''जा अपने घर, उस दीवार पर अम्मा की तसवीर बनाना।''

''गुस्सा क्यों होती हो दीदी, क्या यह मेरा घर नहीं हैं?'' इस पर वह झल्लाकर कहती है- ''एक तो गल्ती करता है,

ऊपर से जुबान लड़ाता है। चल जा, बहुत बड़ी-बड़ी बाते करने लगा है।" सिसकता हुआ मुन्नु अम्मा के पास जाता है।, लाजो उसे पुचकार लेती हैं अब यह डाँट थप्पड़ आम बात हो गई। कूड़े कभी एक दूसरे के द्वार पर फेंक कर गुससा निकाला जाता तो कभी सुखिया लाजो के आँगन में जूठन फेंककर ही मन को शांत करती।

मंगलू काका की वयस्क आँखें सबके मन को पढ़तीं। दिनों दिन बढ़ते मनमुटाव और नोंक-झोंक को देख वह अत्यंत दुःखी हो रहा था। कोई रास्ता नजर नहीं आता जो समाध ाान की ओर ले जाए। कैसे सब पूर्ववत् प्रेम से रहें। इसी चिंता ने उसके रातों की नींद उड़ा दी। आखिरकार एक रास्ता निकल ही आया।सुबह होते ही बड़ी चंचलता से लाजो के पास जाकर कहा- ''मन में एक बात आई है। सोचता हूँ कैसे कहूँ?''

''मन में कहने की सोच लिया है तो कह डालो, घोटने से क्या लाभ?'' लाजो कहती हुई बिस्तर समेटने लगी।

मंगलू ने अपनी बात रखते हुए लाजो से बैठने का निवेदन किया ''तुम जरा शांत दिमाग से सोचो। हम दोनों घरों के बीच एक दीवार ही ता है, यदि इसे हटा दिया जाय तो कैसा हो? हमारा घर क्या फिर से एक नहीं हो सकता है?''

हाँ। तुम ठीक कहते हो। हम पहले ही ठीक थे। कम से कम में हमारे पास अधिक से अधिक खुशियाँ थीं। बिन्दा से कहकर यह शुभ काम आज ही कर डालो।'' लाजो ने प्रस्ताव पारित करते हुए कहा।

मंगलू काका ने जब बिन्दा से कहा उसने सहर्ष मिलकर दीवार को तोड़ने में देर नहीं की। बीच की दीवार टूटते ही घर एक हो गया जिसमें किसी का कुछ नहीं सबकुछ सबका है। सबको अहसास हो चला था कि बँटकर हमने कुद खो दिया था। स्वार्थ और अहंकार ने हमारी मानवता को निगलने की कोशिश की थी पर हम बच गए।

अब आपसी मतभेद मिट चुका था। घर में पहले सी आत्मीयता की किरणें फैलने लगी थीं। एक नई सुबह की शुरूआत सबको ताजगी दे रही थी। वे समझ चुके थे कि जब तक उनके पास कुछ भी नहीं था, वे एक दूसरे के साथ सब कुछ बाँटने को तत्पर थे पर थोड़ी सी जगह और संपत्ति हाथ आते ही स्वार्थ जाग उठा था। सबकी आँखें नम थीं। मन ही मन सब मिलकर काका को धन्यवाद दे रहे थे। आज ये रंग-बिरंगे बिखरे हुए मोती एक सुन्दर माला के रूप में सुशोभित है।

1996 से त्रैमासिक एवं 2001 से मासिक के रूप में निरन्तर प्रकाशित

कल, आज और कल भी बहुपयोगी

विश्व स्नेह समाज

हिन्दी मासिक

एक प्रति–15 / रुपये,
वार्षिक–150 / रुपये,
पंचवर्षीय–750 / रुपये,
आजीवन–1500 / रुपये, संरक्षकः 11000 / रुपये

खाता संख्या–66600200000154, आईएफएससी कोड–बीएआरबी0वीजेपीआरईई (BARB0VJPREE (0-ZERO) सीधे खाते में जमा, आरटीजीएस, नेफ्ट, ऑन लाइन स्थानान्तरण कर, जमा पर्ची की कापी व पत्र व्यवहार का पता ई–मेल या ह्वाट्सएप कर देवें।

पताः एल.आई.जी–93, नीम सराय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद–211011, मो0: 9335155949, ई–मेलः vsnehsamaj@rediffmail.com

देवी

-सुखवर्ष कंवर तन्हा,
नई दिल्ली

दफ्तर से छुट्टी का समय था। तीन-चार जवान लड़कों में आपस में खुसफुसाहट हो रही थी। उनमें से एक लड़का अनाड़ी था। बाकी के शायद इन सब बातों के लिए तैयार थे। भली यार आज इस नये पंछी को वहां की सैर करा देते हैं। रोज सुबह दफ्तर में आ वह अपने काम में इस कदर डूब जाता कि उसे सिर उठाने की फुरसत नहीं होती थी। क्योंकि उसे मालूम था कि घर में उसके बूढ़े माता-पिता को इसी बेटे की आमदनी का सहारा हैं। अभी तो इसकी नयी-नयी नौकरी लगी थी। वह दिन-रात मेहनत कर जीवन में आगे बढ़ना चाहता था। ''अरे श्याम अभी तो तुम्हें इस दफ्तर में आये कुछ ही महीने हुए हैं। अभी तो अपने आप को काम में तथा मेहनत उलझाने लगे हो। अपने ऊपर जितना बांध लोगे उतना ही तंग होओगे। यह अफसर लोग तुम्हें पूरा गधा बना देंगे।''

''तो ठीक है यार खाली बैठ कर बेगार खाना भी तो ठीक नहीं होता।''

''हां देख हम तो थोड़ा बहुत काम कर आराम फरमाते हैं। तू तो सिर दर्द मोल ले रहा हैं। चल कही घूमने चलते हैं।''

''नहीं यार अभी तो छह बजने में आधा घंटा बाकी हैं। हम कब तुम्हें अभी कह रहे हैं। चलो छुट्टी के बाद चलेगें।'' फिर वह सब आपस में एक दूसरे को देख कर हंस दिए। ''चलो यार माना तो सही। इस नये पंछी को वहां की सैर करा देते हैं। तुम्हे क्या पता यह नया पंछी है या पुराना। क्या पता यह छूपा रूस्तम हो। चलो आज पता लग ही जायेगा। श्याम इस बात पर हैरान होता था कि यह रोज चार बजने के बाद आपस में न जाने क्या खुसर-फुसर करते हैं। सब इकट्ठे होकर दफ्तर की बिल्ड़िग से बाहर निकले-चल यार आज तुझे एक चीज दिखाते हैं। पहले वह भी थोड़ा हिचकिचाया लेकिन फिर उनके साथ चल पड़ा बाते करते हुए वह सब रेड़ लाइट एरिया में पहुंच गए। वहां का हिसाब-किताब देखकर श्याम थोड़ा घबरा गया। यह तो 'रेड़ लाईट' एरिया हैं। मुझे कहां ले आए। ''चल अन्दर तो चल उसके साथियों ने उसे ऊपर की तरफ खीचते हुए कहा। 'तू चल तो यार तुझे एक बढ़िया चीज दिखाते हैं।'' ऊपर जाकर बाकी के तीन अपने-अपने काम में व्यस्त हो गये। इसे भी एक सुन्दर सी लड़की के पास छोड़ गए। उसकी सुन्दरता देखकर कोई भी मोहित हुए बिना नहीं रह सकता था। वह उसे छूने की कोशिश करने लगा। लेकिन न जाने अचानक क्या हुआ वह सुन्दर लड़की शायद भाप गई कि यह नया पंछी हैं। उसकी सुन्दरता और आकर्षक शरीर देख उस लड़की ने कुछ निर्णय लिया और कहा, मैं तो काठ की हांड़ी हूॅं। एक बार चूल्हे पर चढ़ गई तो चढ़ गई तो फिर किसी काम की नहीं रहती। तुम मुझे अच्छे घर के लगते हो। स्वास्थ्य भी ठीक लगता हैं। तुम जीवन में किसी अच्छे से खानदान की अच्छी सी लड़की से शादी कर अपना घर बसा लो। देखो तुम इस कीचड़ में मत गिरो। क्यों अपनी जवानी बरबाद करना चाहते हो। तुम मुझे नेक लड़के लगते हो। इन गलियों में बर्बादी के सिवाय कुछ भी नही। क्यों कुछ लोंगों के कहने पर गलत स्थान पर आ गए हो। मैं तो चाहूंगी कि तुम वापिस लौट जाओं इसलिए यह लो अपने पैसे जीवन में कभी भी ऐसी गालियों में मत आना। चाहे तुम्हें कितना भी कोई लालच दे।'' उसे हैरान परेशान छोड़कर वहां से मुड़कर वह दूसरे कमरे में चली गई। कुछ देर के लिए यह ठगा सा खड़ा रहा उसने सिर झुका लिया फिर उसकी सच्चाई और नसीहत उस लड़के ने मान ली तथा वह वहां से अपने दोस्तों को बिना बताए ही लौट गया। फिर जीवन भर उसने ऐसी गलियों का कभी रूख नहीं किया। वह उस सुन्दरी का अति शुक्रगुजार है कि उसने उसे कीचड़ में गिरने से बचा लिया। जिन्हें लोग गिरा हुआ समझते हैं वही गिरने से बचाती भी हैं। वह नेक दिल भी होती हैं उसे ख्यात आया कि हो सकता है किसी मजबूरी की वजह से इस कीचड़ में गिरी होगी लेकिन मेरे लिए तो वह देवी बन कर उभरी हैं। ऐसा सोचता रहा वह जीवन भर।

कलियों की पुकार

उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।
क्या कल मुझको पहचानोगे,
हम वही कली अब पुष्प ढले।।

उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

मैं आज नही वह खुशबू हूं,
न सुन्दर सा प्रसून दिखूं।
न जानू कल को क्या होगा,
कैसे बन मै सुमन सा खिलूँ।।

पर आस नही छोडूगी कभी,
तू लुभ जाए मुझे देख भले।
उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

पुष्पों से तुझको मोह भया,
वह भी कल को मुरझायेंगे।
दुनियां की ऐसी रीत सदा,
चलती आये अभी आयेंगे।।

पर तु कभी नही बदला,
बहे अपनी धून में मस्त भले।
उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

तुझे माली कहूं या रखवाला,
मैं दुनियां को न समझ सका।
हर दिन तू अपना करम करे,
कर-कर तू न कहीं भी थका।।

यह भाग्य मेरा या पुष्पों का,
जो डाली छोड़ के हाथ मले।
उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

उन फूलों से न पूछ सकी,
खुश थे या दिल में दर्द हुआ।
मुंह मोड़ के यूं तेरे साथ चले,
आगे खाई पीछे कुआँ।।

कल को हम भी समझ जाएं,
जन-जन निर्मोही कैसे जले।
उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

'मणि' माली सा तू रूप बना,
कितनो को तूने चैन दिया।
प्रभुसा माली न बन पाओगे,
अब वही करो जो सोंच लिया।।

दिवा एक ऐसी फैला दो,
बेशक वह दिवा हो रात तले।
उपवन के फूलों को चुनके,
मुझ कलियों को क्यूँ छोड़ चले।।

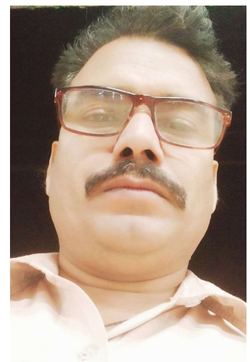

-रघुबंशमणि दूबे
टीकर, देवरिया, उ०प्र०

क्या आप लिखते हैं ?

अपने काव्य संग्रह, कहानी संग्रह, आलेख संग्रह इत्यादि के प्रकाशन हेतु संपर्क करें।

विशेष आकर्षण

1.प्रकाशन मात्र लागत मूल्य पर
2. बिक्री की व्यवस्था
3.प्रचार-प्रसार की व्यवस्था
4.विमोचन की व्यवस्था
5. ऑन लाईन/ऑफ लाइन संस्करण में पुस्तक का प्रकाशन

विस्तृत जानकारी के लिए सम्पर्क करें:
प्रसार सचिव, विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, एल.आई.जी-93, नीम सरॉय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद-211011
ई-मेल: sahityaseva@rediffmail.com

रोमन का प्रश्न

–डॉ० निरूपमा राय
पूर्णियाँ, बिहार

साठ को पार करती उम्र...गहरा साँवला रंग....गठाा हुआ सामान्य कद...शरीर पर धोती और आधी बाँह की कमीज....सर पर कस कर बँधा हुआ अंगोछा और हाथ में लम्बे डन्डे से बंधा झाडू... ये सोमन है। पिछले दो वर्षों से वो जिलाधिकारी चतुर्वेदी जी के यहाँ सफाई कर्मचारी है। भव्य और विशाल डी०एम० कोठी के बड़े से लॉन... बाग-बगीचों... आंगन....स्नानघर....बाथरूम आदि की सफाई का भार सोमन पर ही है। आज जैसे ही सोमन कोठी के गेट पर पहुँचा, उसे देखते ही गेट पर तैनात सिपाही बोला, ‘‘जल्दी जाओ मेम पिछले दरवाजे की ओर बढ़ा। वो तो भूल ही गया था, कल ही तो बहुजी यानि कलेक्टर साहब की पत्नी ने उससे जल्दी आने को कहा था। न जाने क्या बात है? सोचता हुआ वो आँगन का दरवाजा धकेल कर भीतर घुस गया। उसे देखकर डी० एम० साहब की माँ ने कहा, ‘‘आज ही देर कर दी सोमन?’’

‘‘थोड़ी देर हो गयी माँ जी....मैं जल्दी सारे काम निबटा दूँगा।’’ कहकर वो आँगन बुहारने लगा।

‘‘सोमन! जरा जल्दी हाथ चलाओ। वो लोग आते ही होंगे। चारो बाथरूम अच्छी तरह धो देना समझे?

‘‘जी बहुजी।’’

सोमन के मन में कौतुहल था। आज कौन सा खास व्यक्ति आने वाला है? बहुजी इतना तो कभी नहीं टोकती है। रोज सुबह नौ बजे वो आता है और दो घंटे मे सारे काम निबटा कर, अंत में सारा कूड़ा-कर्कट म्यूनिस्पल्टी के डब्बे में डालता हुआ घर चला जाता है। चाहे वो कितनी भी देर से आये या जाए बहुजी कभी कुछ नही कहती। और आज आठ बजे ही शोर मचाने लगी? झाड़ू लगाते हुए सोमन ने देखा बरामदे पर आज खास सजावट की गयी थी। खाना खाने वाले टेबल के बगल में एक और टेबल लगाया गया था। चारो तरफ कई गद्देदार कुर्सियाँ लगी थी। घर में तरह-तरह के पकवानों की सौंधी सुगन्ध फैली हुई थी। घर के सारे लोग, नौकर-चाकर सभी व्यस्त थे। तभी सोमन ने देखा डी०एम० धोती -कुर्ता... माथे पर सिन्दूर चन्दन का तिलक। उनके चेहरे पर भी किसी की प्रतीक्षा की आतुरता साफ पढ़ी जा रही थी।

घर के सारे लोग, नौकर-चाकर सभी व्यस्त थे। तभी सोमन ने देखा डी०एम० धोती -कुर्ता... माथे पर सिन्दूर चन्दन का तिलक। उनके चेहरे पर भी किसी की प्रतीक्षा की आतुरता साफ पढ़ी जा रही थी।

‘‘सारी व्यवस्था हो गयी है न मुन्ना की माँ? कोई कसर तो नहीं है? उन्होंने पत्नी से पूछा तो वो सन्तुष्टि से सर हिलाकर बोली’’ सब ठीक है आप चिन्ता मत करे। पूजा हो गयी हो तो नाश्ता लगवा दूँ?’’

‘‘अभी नही....उन्हें आ ही जाने दो.... बाद में खा लूँगा’’ कहकर वो फिर भीतर चले गये थे।

‘‘अरे! आज सिर्फ आँगन ही बुहारेगा क्या? जल्दी हाथ चला सोमन।’’ माँ जी ने टोका तो सोमन की तंद्रा भंग हुई। आँगन बुहारकर वो बाहर चला गय। बाहर लान आदि की सफाई करके उसने बहुजी के बताए सारे काम जल्दी-जल्दी निबटा दिये और आँगन के एक कोने में बैठकर अंगोछे से मुँह-हाथ पोंछने लगा। एक अर्दली रोज की तरह चाय की केटली लिये आया तो सोमन ने अपना कप आगे बढ़ाते हुए पूछा, ‘‘आज कोई खास लोग आ रहे है क्या?’’ केतली को कप से बहुत ऊपर रखकर चाय ढालते हुए अर्दली ने कुछ कहना चाहा कि बहूजी ने उसे बुला लिया। सोमन के मन में कौतुहल का अपार साम्राज्य था। जब उससे रहा नहीं गया तो उसने डी० एम० साहब की माँ से पूछ ही लिया, ‘‘माँ जी! आज कौन आ रहा है?’’ ‘‘लो, पूरे शहर में ढिढोरा पिट गया है और तुम्हें खबर ही नहीं, कि कौन आने वाला है?’’ सोमन झेंप गया। अब उसे क्या पता डी० एम० साहब के यहाँ कौन आने वाला है। उसकी प्रश्नवाचक निगाहें माँ जी के चेहरे पर गड़ी थी।

‘‘गणेश प्रसाद जी को जानता है?’’

''गणेश प्रसाद.....वो....मन्त्री जी. ...?''

''हाँ बुद्धु! वही आ रहे है। चल अब जल्दी हाथ चला... जा जरा ऑगन की नालियों में फिनॉइल डार कर धो डाल.....। न जाने कलेक्टर कोठियाँ इतने पुराने ढंग की क्यों बनी होती हैं? कुछ भी नयापन नहीं है इस घर में....।''

माँ जी ना जाने क्या-क्या कहती जा रहीं थीं। और सोमन के मन की स्थिति अजब सी होती जा रही थी। गणेश प्रसाद....यानि मंत्री जी, सोमन की जात बिरादरी के हीं तो हैं वो.. .। जब भी सोमन के टोले में काम-काज से फुर्सत पाकर लोग चैन से बैठकर बातें करते हैं, तो गणेश प्रसाद जी का जिक्र एक न एक बार होता ही है। सोमन जानता है, वो पास के ही एक छोटे से गाँव के रहने वाले हैं। जवानी में घर से भागकर दूसरे शहर.... वो क्या कहते है... .राजधानी चले गये थे। फिर किसी पार्टी-वार्टी में घुस कर पैठ बना ली और आज...? सब का भाग्य ऐसा बलवान थोड़े ही होता है। एक वो हैं और एक सोमन है.... जीवन ही हर खुशी... हर इच्छा से बहुत दूर. ...। वो तो भला हो कोठी के अर्दली रामू का जिसने डी० एम० साहब से कहकर उस जैसे लाचार बेटे को सफाई कर्मचारी बनबा दिया। आँगन की नालियों में फिनायल डालकर सोमन फिर बरामदे के पास चला आया। बहूजी टेबल पर आचार चटनी और क्या कहते है? सोमन ने बुद्धि पर जोर लगाया, सलाद.... हाँ.... सलाद रखवा रही थी। सोमन के मन में बहुत कुछ चल रहा था। कौतुहल का अंत नहीं था। उसने पूछा, ''बहूजी! मंत्री जी यहाँ क्यों आ रहे हैं? वो लोग तो सरकारी हौस में ठहरते है न?''

''सरकारी हौस नहीं बेवकूफ! सरकिट हाउस कहते हैं उसे। और तुझे इन सब बातों से क्या? संजू ने उन्हें खाने पर बुलाया है.... बस? बहुजी के बदले अन्दर रसोई से माँ जी ने कहा तो सोमन ने सोचा, संजू यानि कलेक्टर साहब। सोमन ने सोचा, फिर पूछ लिया, ''माँ जी! अगर आप कहें तो मैं यहीं आँगन में बैठा रहूँ.... एक झलक मैं भी देख लेता मंत्री जी की। बड़ी इच्छा थी उन्हें देखने की।''

''ठीक है... पर आँगन के दरवाजे के पीछे बैठना समझा....?''

''जी...।''

''और हाँ, खाना भी खाकर ही जाना।''

''जी अच्छा।''

सोमन का मन खुशी से नाच उठा आज उनके दर्शन करके ही जाऊँगा आखिर मेरी ही बिरादरी के हैं...मेरे जात-भाई। एक बार उनसे मिलकर अपने टोले की दुर्दशा के बारे में भी बताऊँगा....। कितने कष्ट से जीवन काटते हैं हमलोग। कोई सुविधा नहीं टोले में... एक सरकारी चापाकल है..... वो भी बेकार। न अब तक किसी को वृद्धा पेंशन मिली है न सरकारी सहायता का रूपया।

अचानक सोमन के मन में एक विचार कौंधा...। इस बारे में तो उसने अब तक सोचा ही नहीं था। उसने सर झटक कर मानों उस विचार को दूर झटकना चाहा पर वो विचार उसके मन पर उसी तरह छाता चला गया जैसे शाम के धुंधलके पर रात का गाढ़ा अन्धकार। बैठे-बैठे सोमन ने देखा खाने वाले टेबल को तरह-तरह के पकवानों से भर दिया गया था। उसने थोड़ा उचककर देखा. ...खास्ता कचौरियाँ, पुलाव, मटन, मुर्गा, खीर....तरह-तरह की सब्जियाँ. ...रंग-बिरंगी मिठाईयाँ.... और न जाने क्या-क्या। बड़े लोग बहुत कुछ खाते है.... हम गरीब लोग जो पहचान ले वही है। सोमन ने सोचा और ख़ुश हो उठा, आज अच्छा खाना नसीब होगा....।

तभी बाहर कोलाहल सु कर उसने आँगन से बाहर जाकर मेन गेट की ओर देखा मंत्री जी का काफिला गेट

स्वतंत्रता दिवस पर विशेष

प्यारा अपना देश

सबसे न्यारा सबसे अच्छा, प्यारा अपना देश,
सब रहते है इस बगिया में जाकिर, जॉन महेश।
सुखविंदर भी रहते इसमें और सलमा भी रहती,
सब मिलकर त्योहार मनाते मस्त हवा है बहती।
आशा का है घर का मंदिर जस्सी का गुरुद्वारा,
जारा की मस्ज़िद भी यह है चर्च मैरी का प्यारा।
धर्मों का सम्मान करें सब गाते प्यारा गान,
सर्वश्रेष्ठ है भारत भैया अपना देश महान।

-कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव

राव गंज कालपी, जालौन, उ० प्र०

से अन्दर घुसा। कलेक्टर साहब ने पत्नी के साथ उनका स्वागत किया। सोमन का सीना गर्व से फूल गया। आखिर मंत्री जी.....! पर ये क्या? कलेक्टर साहब ने उनसे हाथ मिलाया? और बहूजी ने उनके हाथ से कितने स्नेह और आदर से वो बड़ा सा लाल डब्बा लिया... सोमन वहीं खड़ा सोचता रहा। फिर आँगन के दरवाजे के पास बैठ गया। मन में विचारों का बवंडर उठ खड़ा हुआ था, बहुजी तो मुझे दूर से थाली में गिराकर खाना देती है। उनको कैसे खिलाएंगी? और माँ जी, बाबूजी? वो तो पाँच फुट दूर ही रहते हैं मुझसे, उनके साथ कैसे बैठेगे भला? उसकी सोच को जबरदस्त झटका लगा, जब उसने देखा.... मंत्री जी माँ-बावूजी के चरण स्पर्श कर रहे है। माँ बावूजी ने उनका माथा छूकर उन्हें आशीर्वाद भी दिया? सोमन पैसे आकाश से गिरा। अगर मैं उन्हें छू लूँ तो? मार-मार कर मेरा भुर्ता ही बना डालेगे सब। बचपन से वो जो भी देखत-सुनता आया था उसका प्रभाव उनके मन मस्तिष्क के साथ आत्मा पर भी गहरा जमा हुआ था। वो विस्फरित नेत्रों से दरवाजे के पीछे खड़ा सामने देखता रहा। बहुजी खेब कीमती चमकदार बर्तनों में खुद मनुहार पूर्वक खाना, परोस रही थी। कलेक्टर साहब मंत्री जी की बगल वाली कुर्सी पर बैठें न जाने किस बात पर हँस रहे थे। और बाबूजी सामने की कुर्सी पर बैठे थे..। भले ही खा नही रहे थे। कमाल हो गया, सोमन ने सोचा। ये लोग तो बड़ा जात-पात मानते है। इन्हें आज क्या हो गया है? न माँ-बाबूजी को छूआछूत का स्मरण है, न बहुजी को बर्तन को छुआने का भान। फिर मुझ में ऐसा क्या है... जो मुझे छूने से ये भ्रष्ट हो जाऐगे? अगर मैं इनके बर्तन में खा लूंगा तो क्या बिगड़ जाएगा? उसने कोने में चापाकल के पास रखी अपनी तामचीन की थीली, बिना हेन्डिल के कप... टूटी-फटी दरार पड़ी कटोरियों और टेढ़े से ग्लास को अजीब सी दृष्टि से देखा और घुटनों में सर देकर बैठ गया।

''सोमन, चलो तुम भी खाना ले लो।'' बहुजी का स्वर सुनकर सोमन की तंद्रा भंग हुई। वो चुपचाप उठकर आँगन में चला आया। भीतर बैठक से बात-चीत के स्वर बाहर आ रहे थे। आँगन में भी काफी शोर था हृदय में जब प्रश्नों की गूंज उठी होती है न तब सारा संसार निःशब्द प्रतीत होता है। ''अरे! आज क्या हो गया है तुझे? किन खयालों में गुम है? अपनी थाली भी नहीं लाया अब तक?'' बहुजी का तीक्ष्ण स्वर उभरा तो सोमन जैसे नींद से जागा। उसकी भूख मिट चुकी थी। उसने आँगन के कोने में पड़े अपने बर्तनों को फिर एक बार देखते हुए कहा,

''मैं आज खाना खाऊँगा नहीं... ले कर जाऊँगा... अभी खाने का मन नहीं है।''

''रामदीन! पेपर-पॉलीथीन में बाँध कर सोमन को खाना दे दो।'' आदेश देकर बहुजी भीतर चली गयीं। और कुछ देर बाद खाने की पोटली उठाए सोमन बाहर निकल आया। उसके मन में आँधियाँ सी चल रही थी। वो एक कड़वे सत्य से साक्षात्कार कर आया था।

''अब समझा, मैं गरीब हूँ न। धन, पदवी, कुर्सी-रूतवा जिसके पास है उसकी कोई जात थोड़े ही होती है। जात-पात, धर्म सब ढकोसला है। समाज में दो ही वर्ग है... सिर्फ दो जात... एक गरीब दूसरा अमीर। अमीर हर हाल में हर चीज में श्रेष्ठ है। प्रेम और आदर पाने योग्य है। और गरीब चाहे किसी भी जात का, किसी भी धर्म का हो... अस्पृष्य, हीन और तुच्छ है? वाह रे समाज!'' मन ही मन सोचता हुआ सोमन मेन गेट की ओर बढ़ने लगा। आज उसके अहं को भीषण ठेस लगी थी। और ये स्वाभाविक भी था, प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में जन्मजात एक भावना होती है.... स्वयं को परिज्ञापित करने की भावना। सबका एक स्वाभिमान होता है... और स्वाभिमान पर लगी हल्की सी ठेस भी अन्तर्मन में भारी बवंडर का सृजन कर सकती है। उसी बवंडर से जूझता सोमन हागे बढ़ता जा रहा था। उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था। एक बार मंत्री जी से जरूर भेंट

''अब समझा, मैं गरीब हूँ न। धन, पदवी, कुर्सी-रूतवा जिसके पास है उसकी कोई जात थोड़े ही होती है। जात-पात, धर्म सब ढकोसला है। समाज में दो ही वर्ग है... सिर्फ दो जात.... एक गरीब दूसरा अमीर।

करेगा। वो उसे इस तरह कभी नहीं धुत्कारेंगे. .. आखिर वो....?

बाहरी गेट पर भारी भीड़ थी। मंत्री जी सुरक्षा कर्मियों के घेरे में कैद धीमी गति से डी० एम० साहब के साथ कार की ओर बढ़ ही रहे थे कि अचानक सोमन घेरा तोड़ते हुए तेजी से भीतर घुस गया और मंत्री जी के पाँव पर गिर पड़ा।

कौन है ये? शोर मच गया।

सुरक्षाकर्मियों ने सोमन को पकड़ लिया। उनकी पकड़ में असहज होते हुए भी सोमन की प्रसन्नता का पारावार न था। मंत्री जी सामने जो खड़े थे। वो भावविवहल होकर बोला, माई-बाप! मैं साहब का सफाई कर्मचारी हूँ। आपको देखकर आँखे धन्य हो गया। मैं आपसे कुछ कहना.....।''

सोमन को भारी आश्चर्य हुआ जब मंत्री जी ने उसे हिकारत भरी दृष्टि से और डी० एम० साहब को क्रोध भरी दृष्टि से देखा। दोनों भिन्न दृष्टियाँ सोमन के कलेजे पर बिजली की तरह गिरीं।

कलेक्टर साहब चीख से पड़े, ''इसे किसने यहाँ आने दिया?''

मुँह की बात सोमन के मुँह में ही रह गयी थी। भीड़ के एक रेले ने उसे पीछे धकेल दिया और वो नीचे गिर पड़ा। मंत्री जी की कार धूल उड़ाती हुई चली गयी। उस धूल ने धरती पर गिरे सोमन की पूरी आकृति को आवृत कर स्वयं में समेट लिया। हतप्रभ संज्ञा शून्य सोमन ने जैसे अपने आप से पूछा,'' ऐसा क्यों होता है? और लड़खड़ाते हुए कोठी के विशाल गेट से बाहर निकल गया। उसे अच्छी तरह पता था कल से यहाँ भी उसका प्रवेश निषेध हो जाएगा। वो थरथराता हुआ चला जा रहा था। कुछ देर पहले मन में कौधे प्रश्न की तेज धार उसकी आत्मा को आरी की तरह काट रही थी। सोमन की आत्मा लहूलुहान होती जा रही थी।

सिलसिला

सिलसिला कुछ इस तरह बना...!
कि मैं लम्हों को ढूंढता था खुली हुई नींद के तले।
क्योंकि मुझे सपने देखना पसंद थे - जागते हुए भी;
और चूंकि मैं उकता गया था ज़िन्दगी की हकीक़त से!
अब किताबो में लिखी हर बात तो सच नहीं होती न .
इसलिए मैं लम्हों को ढूंढता था।।

फिर एक दिन कायनात रुक गयी;
दरवेश मुझे देख कर मुस्कराये
और ज़िन्दगी के एक लम्हे में तुम दिखी;
लम्हा उस वक़्त मुझे बड़ा अपना सा लगा,
जबकि वो था अजनबी - हमेशा की तरह।।

देवताओ;
मैंने उस लम्हे को कैद किया है ..
अक्सर अपने अल्फाजो में,
अपने नज्मो में ...
अपने ख्वाबो में ..
अपने आप में ....।।
एक ज़माना सा गुजर गया है;
कि अब सिर्फ तुम हो और वो लम्हा है।।

ये अलग बात है कि तुम हकीक़त में कहीं भी नहीं हो.
बस एक ख्याल का साया बन कर जी रही हो मेरे संग.
हाँ, ये जरुर सोचता हूँ कि तुम ज़िन्दगी की धडकनों में होती
तो ये ज़िन्दगी कुछ जुदा सी जरुर होती....।।

पर उस ज़िन्दगी का उम्र से क्या रिश्ता.
जिस लम्हे में तुम थी, उसी में ज़िन्दगी बसर हो गयी.
और ये सिलसिला अब तलक जारी है....

-**विजय कुमार सप्पत्ति,** सिकन्दराबाद, तेलांगना

लघु कथाएं

पिता की आस

''किशन बहुत रो रहा या अब पश्चात से उनका मन जर्जरित हुआ या पिता का अहम समझ गया था। शंकर और सुशीला का बेटा किशन या वह अपने सयय दोस्तो का संग किया सब शराब पीते थे पैसे लेकर मंजा उड़ाते थे। एक बार मॉ से पैसे मॉगा खर्च के लिए मॉ ने प्यारे बेटा पूछा न सौ रूपये दिया बेटा खुशी से दोस्तों के साथ होटल गये सिनेमा गये। इसी तरह मॉगकर माता से जा रहा या एक दिन किशन बहुत देर तक घर न आया पिता पूछा कहॉ गया हैं? तुमने प्यार से सिर पर रखा हैं कुछ थी बाते न सुनना न कहना से आज जमाना बदला हैं। एक मोबाईल पूछा तथा नया जूता ड्रेस पूछ रहा हैं। दिलाना शंकर बताया मेरा पगार पेय तो कम हैं बाड़ा बिजली का बिल, दूध का पैसा, समान लियाना हैं न इतना महंगा पूछने से कैसे दू कहा फिर दोनों (माता-पिता) आपस में वादा की किशन ने रोज आपका यही हैं बेटे की मॉग पूरा न कर सकते हैं।

गुस्सा करके गया। शंकर ने अपने लिय एक छोटा सा घर बनाना चाहता था, ऋण लिया था एल० आई० सी० को भरने 5000/-रूपये रखे थे किशन दोपहर आया था मॉ से पैसे न देने के कारण पिता के जेब से एक हजार रूपये मालुम न होने की तरह उठाकर चला। इधर शंकर एल० आई० सी० भरने पैसे देखा पैसा कम हैं।

पत्नी से पूछा तुमने लिया क्या? नहीं कहा, फिर कौन लिया! पैसे फिर पैसे जोड़ना भरने को कष्ट या इसी चिंता में शंकर बेहोश हो गया, सुशीला क्या हुआ आपको रोते हुए पूछा आज भी बेटा 12 बज गया तो घर न आया शराब पीकर बैंक में आते समय गिरकर चोट लगी थी। शंकर सोचा मैं मर गये तो पैसा बहुत मिलेगा (एल० आई० सी० पिफ आदी) पत्नी पुत्र सुख से रहते हैं। शंकर आत्महत्या करने सोचा यही मार्ग हैं क्योंकि पत्नी पुत्र मेरा कष्ट न समझते मैं पढ़ते समय पॉच मील चलकर पैदल एक ही कुरता शर्ट या उसी को पहनकर और एक दोस्त से लेकर बिजली के बिना पढती थी बाद में एक छोटा सा नौकरी मिला। अब आज के बच्चे कुछ न समझते तुम्हारी पुरानी क्या न बताओं आज जमाना बदल गया हैं। कहते थे मेल-जोल न होने के कारण सदा झगड़ा मन पर बहुत परिणाम हुआ। शंकर आत्महत्या कर ली। पत्नी जोर चिल्लाने लगे क्या कर दी आपने बेटा भी अब तक न आया, आबुंलेंस में बेटा को भी लाया दो बज गई बेटा को इस तरह पिता देखों तुम्हारी चिंता में मर गई मॉ शराब पीकर कॉलेज गई मुझे संस्पेड़ा किया मैं दोस्तों के साथ आते समय दुर्घटना हुई। मॉ मुझे माफ करो पिता के जेब से मै ही चुरा ली पैसे पिता के शव के पास बैठकर पश्चाताप से पिताजी माफ कीजिए आपकी बात न सुना मैं पिता ने सब बात अस्पष्ट से सुन रहा था घर आये मरने का यह सहज मृत्यु नही आत्महत्या की हैं। पैसे ज्यादा न आते बताने लगा घर बनाने की आशा दे ही रहा था। पिता की प्राण पक्षी उड़ गई लेकिन बेटा और माता थे क्या हुआ भगवान हम एक तरह सोचते हैं किस्मत की बात अलग हैं पछताने लगा।

-जे० वी० नागगरत्नम्मा, शिवमोगा, कर्नाटक

बाढ़ की पाबंदी

अभिलाष बाबू ने संसार बसाया हैं। दो बेटे और दो बेटियॉ हैं। सरकारी नौकरी भी हैं। पत्नी उर्वशी खूब सुंदरी हैं। अलहढ़ जवानी भेक कर दोनों पति पत्नी बेश खूस थे। सुंख के बाद दुख भी आ जाता हैं। अभिलाष बाबू के यौथ परिवार की टूटन उन्हें झकझोर दिया हैं। तीन भाई और चार भतीजों की आनाकानी दूर करने उसकी कोशिश ना कामयाब हो गयी। परिवार विभक्त हो गया। अभिलाष विचल गया। वह एक कवि था। कविता के सहारे उन दुःस्थितियों का सारस्वत चिंतन लिखन हुआ करता था। इसी बीच पहले बेटा और दूसरी औलाद बेटी अपनी पसंद के चहते साथियों से गुप्त संपर्क रखने लगे। अभिलाष की अभिलाषा मचल गयी परिवार थिरकने लगा। सुन्दरी गृहस्थी की नादानी भी अहंकार में बदल गयी। स्वामी को उठक बैठक करवाना मुमकिन न हो पाया। दूध उबले तो चूल्हे को और इन्सान उबले तो मरघट को की भांति उनका परिवार का विघटन होने लगा। बड़े बेटे को नौकरी में अभिलाष लगा दिया तो वह घर से अलग हो गया और अभिमान करने लगा कि

जेबर आभूषण न देना तो बाप मॉ का घोर अन्याय हो गया हैं। इसीलिए तनख्वाह से एक कौड़ी भी आप अनचाहे आदमियों को नहीं दिया जाएगा। बस रिस्ता खत्म। ओह कैसी अपार शांति दायित्व मुक्ति भगवान को शत् धन्यवाद जो नौकरी वाली एक दुल्हन मुझे मिल गयी। सोच रहा था बड़ा छोकरा उन परिवार वालों की संकट से आसानी से छुटकारा मिल गया। वाह, वाह रे रूपयों की ताकत जापानी नोट की तरह अर्थ की कीमत घटती जा रही हैं। इस महॅंगायी के युग में अच्छी तरह जिंदगी गुजारना मुश्किल होता जा रहा हैं।

इसीलिए फालतू नातू को टाटा टाटा बाई बाई बाबा अलविदा। अब आई बड़ी बेटी की बारी वह छोटी-छोटी बातों पर अपनी नाराजगी जताती रहती हैं। कभी कभार अपने पेट अचानक दुखाने से लगातार नाच नचाया करवाती थी। मानो किसी अपदेवी उसकी अंदरूनी शरीर में अखाड़ा मचा रही हैं तमाम घर परिवार तो इसी से तंग रह जाते थे। बद किस्मत को कोस रही थी पत्नी देवी। बेचारा अभिलाष कितने डॉक्टरों महिरों के पास जाकर इलाज करवाता और पानी की तरह उसे दवा दारू कराने का इन्तजाम भी करवाता था। इसी बीमारी की वजह गृहकर्ता ही अभियुक्त बन जाता था। क्योंकि उसकी कविता लिखने से ही परिवार के प्रति उसकी लापरवाही मानी जाती थी। बीचों बीच वह चालाक लड़की भी पढ़ाई में अब्बल रखने से घर की शान बढ़ती थी। उसने ऑख मिचौली खेली और एक असंभव प्रेम विवाह प्रस्ताव से सारे परिवार को झकझोर देने लगा।बहुत कुठिंत भाव से उसकी शादी भी मुमकिन हो गयी और एक नाती के एक साल की परवरिश होने के बाद उसकी यादों की ताकत बिल्कुल शून्य हो गयी। उसने राह पकड़ ली। आई फिर तीसरी औलाद की बारी वह चुप्पी खामोशी की अवतार थी। स्नाकोत्तर साहित्य उत्तीर्ण होने के बावजूद न जाने उसके मने में क्या था।

अभिलाष को मालूम न हो सका। मॉ तो आसमान में तैर रही थी। गृहस्थ को अचंभा बना देती थी। तनिक भी परेशनी झेल नहीं पाती थी। मासिक ऋतु स्त्राव बिगड़ जाने की बीमारी भी उसे विकृत मानसिकता की ओर ले जा रही थी। उच्छी इलाज कराने अभिलाष ने कविता महारनी की रचना को भी जलांजलि दे दी क्षुब्धा पत्नी की अच्छी तरह चिकित्सा-अस्त्रोपचार करवां कर तंदस्स्त औरत बनवा दी। मध्यक्ति तनख्वाह से दस पंद्रह हजार मुद्रा भी दांव पर लगा कर उसने सफल आत्म संतोष प्राप्त किया था। फिर भी धर्म पत्नी गुर्राने लग रही थी कि दूसरी बेटी की शादी फौरन क्यों नहीं करवा रहे हो ? उम्र पच्चीस साल लपक रही हैं। जो प्रसाव लाया गया दोनों मॉ बेटी उसके बाल से खाल ही निकालती रही थी। उनके मन का सुराग गृहकर्त्ता को तनीक भी नहीं जताया जाता था। एक बहुत आग्रही पध से उनकी रजामंदी पर हीं बंधन की नींव ड़ाली गयी। पत्नी जी के नाखून भाई बिरादरी चुप्पी साधते रहते थे। इस परिवार से उनका अच्छा दिलदार आर्थिक बर्ताव हो नहीं पा रहा था। इसीलिए वरपक्ष की कमजोरियों पर उनका पर्दाफाश भी नहीं हो सका। एक जन तो ''नरे वा गुजरे अश्वथामा हत'' कहकर व्यग्यं भी करने लगा मानों तुम कश्मकश झेलते रहो और हम लोग ऐन वक्त के बाद ही सही दिखलाकर तालियॉ बजाते रहेंगे। शादी के बाद वही हुआ जो पत्नी के बिरादरी चाहते थे। पत्नी जी की तबियत बुरी तरह टूट गयी और बुद्धू बनकर बेटी पर तरस खाने लगी उस पर सारे घर परिवार की दौलत उडोल देने रातों दिन एक करने लग गयी बेटी ने तो लुकछिप कर आनंद उठाने लगा और मौनावती बनकर ही अपने घर सभांलने चल पड़ी। अब आ गयी चौथे की बारी। अभिलाष की अपनी एक लायक विद्यार्थिनी के साथ छोटे बेटे का ब्याह करवा दिया गया। इसी से सबके सब घबरा गए हैं चूकिं इस की कहानी लंबी नहीं हो पाई तो बुद्धू नायक को सब भक्त भोगने लगे। इसी से कविता की शुष्क धारा में फिर प्रबल ज्वार आने लगा! कथा कविता की बाढ़ को कलम की पाबंदी दिलाने की कोशिश हुई। अब आ गयी अभिलाष की आखरी बारी वह शांत स्थिर स्वाधीन चिंता नायक बन गया। कलम चलती रही हैं। जिंदगी जूझती रही हैं। तृप्ति मिलती रही हैं।

-श्री हरिहर चौधरी
गंजाम, उड़ीसा

गुरू ही हमें जीवन का सही मार्ग दिखाता है : शुभ द्विवेदी

भारतीय संस्कृति एवं परंपरा में गुरू का स्थान निस्संदेह सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि गुरू ही हमें जीवन का सही मार्ग दिखाता है. इस आशय का प्रतिपादन चि. शुभ द्विवेदी, प्रयागराज ने किया.

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, प्रयागराज, उ. प्र. के तत्वावधान में आयोजित द्वितीय बाल संसद में 'गुरू की महिमा' विषय पर आयोजित आभासी गोष्ठी में मुख्य अतिथि के रूप में अपना उद्‌बोधन दे रहे थे.

शौनक जपे, औरंगाबाद, महाराष्ट्र ने समारोह की अध्यक्षता की. शुभ द्विवेदी ने आगे कहा कि गुरू के बिना ज्ञान नहीं होता. इसलिए गुरू को ईश्वर से भी बढकर माना गया है. गुरू ही ईश्वर को पाने की राह दिखाता है.

संस्थान के सचिव डॉ.गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी ने अपनी प्रस्तावना में कहा कि अध्यापक और गुरू में अंतर होता है क्योंकि अध्यापक अपने छात्रों को किताबी ज्ञान देते हैं बल्कि गुरू अपने शिष्य को जीवन में सफलता पाने के मार्ग पर ले जाता है.

विशिष्ट अतिथि डॉ. पूर्णिमा शर्मा, दिल्ली ने कहा कि जीवन के घोर अंधकार में प्रकाश दिखाने का काम गुरू करता है. हर गुरू में माता-पिता और सखा का भी रूप दिखाई देता है, क्योंकि गुरू में माँ की ममता, पिता जैसी दृढता तथा सखा सम सुख-दुख में साथ देने की तत्परता दिखाई देती है.

संस्थान के अध्यक्ष तथा गोष्ठी के मुख्य दर्शक प्राचार्य डॉ. शहाबुद्दीन नियाज मुहम्मद शेख, पुणे, महाराष्ट्र ने अपने आशीर्वचन में कहा कि बच्चों के लिए प्रथाम पाठशाला उनका परिवार है। माँ आद्य गुरू है, क्योंकि माँ के उदर से जन्म लेकर बच्चा माँ की गोद में बडा होने लगता है. बच्चों को चलना, बोलना माँ सिखाती है. पिता के अनुशासन में उसे बहुत कुछ सीखने को मिलता है. पाठशाला में जाने के बाद शिक्षक के माध्यम से किताबी ज्ञान और जीवन का पाठ भी मिलता है.

गुरू की महिमा पर कु. जान्हवी गवले, औरंगाबाद, महाराष्ट्र, अथर्व श्रीवास्तव, सुल्तानपुर, उ. प्र., सिद्धि जायसवाल, कोरबा, छ. ग., खुशी वानखेडे, औरंगाबाद, महाराष्ट्र, ओमांश श्रीवास्तव, लखनऊ तथा निमिश दंडके ने अपने विचार व्यक्त किए.

कु. स्वरा त्रिपाठी-लखनऊ, प्रद्युम्न खामगावकर-औरंगाबाद; धैर्य दिक्षित-गुडगाव, कु. स्वरा कुलकर्णी- औरंगाबाद, कु.श्रद्धा नायक - औरंगाबाद, कु.वन्या श्रीवास्तव - लखनऊ, कु. अवनी तिवारी - इंदौर; कु. आराध्या बोरसे - औरंगाबाद ने काव्य पाठ किया.

संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए शौनक जपे, औरंगाबाद ने कहा कि, गुरू का स्थान जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण है. गुरू के बिना जीवन में सही मार्ग की पहचान नहीं होती. एक पथ प्रदर्शक के रूप में गुरू का हमारे जीवन में महनीय स्थान है.

संगोष्ठी का आरंभ कु. अवनी तिवारी, इंदौर के नृत्य से हुआ. संचालन शौर्य दीक्षित ने किया तथा बाल संसद प्रभारी डॉ. रश्मि चौबे, गाजियाबाद ने धन्यवाद ज्ञापन किया.

पटल पर डॉ. सुनीता प्रेम यादव-औरंगाबाद, महाराष्ट्र; श्रीमती पूर्णिमा कौशिक - रायपुर, डॉ. पूर्णिमा झेंडे-नासिक, श्री ओमप्रकाश त्रिपाठी-सोनभद्र, श्रीमती ज्योति तिवारी- इंदौर सहित अन्यान्य विद्वतजनों ने गोष्ठी का आंनद लिया और सराहा.

कविता लेखन का कार्य चुनौतीपूर्ण : डॉ० जेबा रशीद

नागपुर/पुणे। प्रत्येक भाषा में कविता लिखी जा रही है। परंतु कविता लेखन का कार्य बड़ा चुनौती भरा है, क्योंकि कविता की अपनी शर्ते हैं। इस आशय का प्रतिपादन विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, प्रयागराज की राजस्थान राज्य प्रभारी डा० जेबा रशीद, जोधपुर ने किया।

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश के रजत वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित आभासी काव्य गोष्ठी में वे अध्यक्षीय उद्बोधन दे रही थी। डा. जेबा रशीद ने आगे कहा कि, आज की कविताओं में अपनापन झलकता है। क्योंकि कविता शब्दों को सुलगते अर्थ देती हैं, जिससे हमारी आत्मा को संतुष्टि मिलती है। कविता समाज के लिए संदेश देती है और हमारी सुप्त चेतना को जागृत करती हैं।

मुख्य अतिथि डा.अनीता पंडा, शोध निर्देशक, सीएसआईआर, शिलांग, मेघालय ने कहा कि साहित्य के विभिन्न प्रकारों में उत्तम अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम कविता है। डा. सीमा वर्मा, लखनऊ, उ०प्र० ने कहा कि सरल व सहज अभिव्यक्ति अपनी भाषा में ही संभव है। दूसरी भाषा में अभिव्यक्ति दुर्लभ कार्य है।

डा. अनसूया अग्रवाल, महासमुंद, छ. ग.ने कहा कि वास्तव में हमारी अपनी भाषा ही हमें संस्कारित करती है। विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान हिंदी भाषा के माध्यम से हमें इंसान बनाने का कार्य कर रहा है, जो वास्तव में अत्यंत प्रशंसनीय है।

संस्थान के अध्यक्ष डा० शहाबुद्दीन नियाज मोहम्मद शेख, पुणे, महाराष्ट्र ने स्वागत उद्बोधन में कहा कि कविता का अपना अलग क्षेत्र है, जिसमें शब्दों की महिमा होती है। कवि मन संवेदनशील होता है। अतः कवि को शब्द चयन पर ध्यान देना जरूरी है। कविता लेखन एक शाब्दिक कला है, जिसका संबंध भाषा के साथ गहरा होता है। कविता हमारे जीवन की भाषा है। कविता के बिना हम जी नहीं सकते।

इस आभासी काव्य गोष्ठी में श्रीमती नूपुर मालवीय, प्रयागराज, उ०प्र०, श्री लक्ष्मीकांत वैष्णव, चांपा, छ.ग., श्रीमती विद्या मिश्र, शिलांग, मेघालय, प्रो० लता चौहान, बेंगलुरु, श्रीमती मधु शंखधर, 'स्वतंत्र' प्रयागराज, डॉ०सुनीता प्रेम यादव, औरंगाबाद, डा० रश्मि चौबे, गाजियाबाद, डा. पूर्णिमा उमेश झेंडे, नासिक, श्रीमती सुवर्णा जाधव, पुणे; डा. पूर्णिमा मालवीय; प्रयागराज, डा.सुधा सिन्हा-पटना, बिहार, डा. मुक्ता कान्हा कौशिक-रायपुर, छ.ग., श्री ओम प्रकाश त्रिपाठी, सोनभद्र, उ. प्र.; डा. अन्नपूर्णा श्रीवास्तव-पटना, श्री नरेंद्र भूषण-लखनऊ; प्रा०रोहिणी डावरे -अकोले, महाराष्ट्र आदि कवियों ने अपनी कविताएं प्रस्तुत की। आरंभ में डॉ० सुनीता प्रेम यादव ने सरस्वती वंदना प्रस्तुत की।

संस्थान के सचिव डॉ० गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी ने संस्थान की आगामी योजना को बताते हुए सभी के प्रति हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित किया। काव्य गोष्ठी का सफल व सुंदर संचालन अध्यापिका रोहिणी डावरे, अकोले, अहमदनगर, महाराष्ट्र ने किया। पटल पर डा समीर सैयद श्रीरामपुर, पूर्णिमा कौशिक रायपुर छत्तीसगढ़ सहित अनेकों की उपस्थिति थी।

छोटे बच्चों पर शिक्षा के माध्यम से संस्कारों की आवश्यकताः डा. शेख

बच्चों पर उनकी छोटी आयु से ही शिक्षा के माध्यम से भारतीय संस्कारों की नितांत आवश्यकता है इस आशय का प्रतिपादन विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान, प्रयागराज, उ०प्र० के अध्यक्ष प्राचार्य डा. शहाबुद्दीन नियाज मोहम्मद शेख पुणे ने किया.

विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान की छत्तीसगढ़ इकाई द्वारा क्या 'छोटे बच्चों को स्कूल भेजना उचित है' विषय पर आयोजित राष्ट्रीय आभासी गोष्ठी में अध्यक्षीय समापन अपना मंतव्य दे रहे थे. डा. डीपी देशमुख की मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थिति थे.

डा. शहाबुद्दीन शेख ने आगे कहा कि लगभग ३२ करोड़ विद्यार्थी हमारे देश में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं. छोटे बच्चों के लिए देश में लगभग साढ़े तेरह लाख बालवाड़ियाँ तथा साढ़े ग्यारह लाख प्राथमिक विद्यालयों में लगभग दस करोड़ बच्चों को मध्यान्ह भोजन की व्यवस्था है, जो विश्व में सबसे वृहत व्यवस्था है.

वैश्वीकरण के दौर में छोटे बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में भर्ती करा कर उन पर पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के संस्कार किए जा रहे हैं, जो बच्चों के भविष्य की दृष्टि से अत्यंत घातक है. अतीव प्रसन्नता इस बात की है कि नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में छोटे बच्चों के लिए क्षेत्रीय तथा मातृभाषा में शिक्षा देने की बात कही है जो सराहनीय कदम है.

संस्थान के सचिव डॉ० गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी ने अपने प्रास्तविक उद्बोधन में कहा कि बच्चों पर होमवर्क का बोझ नहीं डालना चाहिए. बच्चों को ऐसा न लगे कि उन्हें स्कूल में कैदी बनाकर उनका बचपना छिना जा रहा है.

मुख्य वक्ता डा. सोनाली चेन्नावर, रायपुर, छत्तीसगढ़ ने विषय के पक्ष-विपक्ष पर मत वक्तव्य करते हुए कहा कि छोटे बच्चों को स्कूल अवश्य भेजें, पर उन पर स्कूल बैग, किताबों का बोझ ना डालें. उनकी शिक्षा भय से मुक्त होनी चाहिए.

मुख्य अतिथि डा. डी. पी देशमुख, रायपुर, छत्तीसगढ़ ने अपने वक्तव्य में कहा कि औपचारिक शिक्षा बच्चे अपने घर में पाते हैं. अनौपचारिक शिक्षा पाने हेतु उन्हें स्कूल अवश्य भेजा जाए. क्योंकि उनके सर्वांगीण विकास के लिए उन्हें स्कूल भेजना आवश्यक है.

डा. सुनीता प्रेम यादव, औरंगाबाद, महाराष्ट्र ने कहा कि छोटे बच्चों को उनके कौशल विकास के लिए स्कूल भेजना जरूरी हैं. औपचारिक व अनौपचारिक इन दोनों प्रकार की शिक्षा बच्चों को मिलनी चाहिए.

आभासी गोष्ठी का आरंभ श्री लक्ष्मीकांत वैष्णव चांपा, छत्तीसगढ़ द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना से हुआ. डा. अनसूया अग्रवाल, महासमुंद, छ.ग. ने स्वागत भाषण दिया. गोष्ठी का सफल संयोजन व संचालन डॉ. मुक्ता कान्हा कौशिक हिंदी सांसद, छत्तीसगढ़ ने किया तथा डॉ. सरस्वती वर्मा महासमुंद, छत्तीसगढ़ ने आभार प्रदर्शित किये.

संस्कार और भारतीय संस्कृति

आरम्भ में न तो संस्कार थे और न ही संस्कृति. सभी कुछ प्राकृतिक रूप में था, स्वाभाविक था. किन्तु समय के साथ-साथ मानव के स्वभाव में विकृति आने लगी, विकार आ गये. तब उसके आचार-विचार को ठीक करने के लिये ही संस्कारों का प्रचलन शुरू हुआ और स्मृतिकाल में आरम्भ हुआ. साहित्य काल में कोई संस्कार का प्रचलन नहीं था. इस काल में ही मनु या याज्ञवल्क्य आदि ने ही संस्कारों का शुभारम्भ किया. भारतीय संस्कृति में मानव जीवन निरूद्देश्य व्यर्थ व बेकार नही है. मानव जीवन जीवात्मा को परमात्मा तक ले जाता है. व्यक्ति धर्म, अर्थ और काम के माध्यम से मोक्ष तक पहुंचाता है. इसी बात को ध्यान मे रखकर प्राचीन आचार्यो ने स्मृतिकारों ने मानव के जीवन के लिये विभिन्न संस्कारों का विधान किया था. ये संस्कार जीवन की नींव पड़ने से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक होते है. एक प्रकार से यह संस्कार मानव के किसी भी कार्य को अच्छा बनाने के लिये ही होता है. उदाहरण स्वरूप वस्त्र बनाने से पहले वस्त्र का संस्कार होता है. कपास से लेकर धागा बुनना, रंगना, कातना, आकार देते हुए सिलाई करना यह स्वयं वस्त्र का संस्कार है तभी वह अच्छा बनता है. हमारी भारतीय संस्कृति में अच्छी सन्तान पाने के लिये संस्कारों को करना जरूरी माना गया. यह संस्कार जन्म से पहले यानि गर्भ के समय से ही प्रारम्भ हो जाते थे. सबसे पहले संस्कार का नाम ही गर्भाधन संस्कार है. भारतीय संस्कृति में संतान की उत्पत्ति भली प्रकार योजना बनाकर सोच विचार करके विधि विधान और मंत्रोचार द्वारा होती थी जो अचानक नहीं सोची समझी प्रक्रिया के अन्तर्गत आती थी. संस्कारों के नामों और संस्कारों की संख्या मे मतभेद है. आचार्य गौतम ने 47 संस्कार माने है. अंगिरा ऋषि ने 25 संस्कार बताये है. किन्तु अधिकांश ने संस्कारों की संख्या 16 ही बतायी है. इसके अलावा संस्कारों के नाम मतभेद है. कुछ अन्त्येष्टि को संस्कार ही मानते है तथा वानप्रस्थ और सन्यास को भी संस्कार मानते है और कुछ लोग अन्त्येष्टि, वानप्रस्थ तथा सन्यास को संस्कार नहीं मानते है. प्राचीनकाल में 40 संस्कार माने जाते है कि इन संस्कारों के होने से व्यक्ति का परमात्मा से एकाकार हो जाता है या वह इस योग्य बन जाता है कि उस पर से माया जाल का आवरण हटकर परमात्मा के मिलन के योग्य हो जाता है. उस समय के 40 संस्कार निम्न थे. 1— गर्भाधन 2— पुंसवन 3—सीमन्त 4—जातकर्म 5—नामकरण 6—अन्नप्राशन 7—चूड़ा कर्म 8—उपनयन 9—प्राजापत्य 10, 11, 12 ये प्रजापत्य के अन्तर्गत आते है. ये व्रत के रूप में होते थे जो गुरूकुल में किये जाते थे. 13—समावर्तन 14—विवाह 15—19 महायज्ञ (ये दैनिक यज्ञ होते थे-ब्रहमयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्य, ज्ञान, भूतयज्ञ) 20—26— पाकयज्ञ. ये सात है-अण्ठक या अन्वष्टक, स्थालीपाक, पार्वण, श्रावणी, अग्रहायसी, चैत्री और आश्वयुजी। 27—33—हर्वियज्ञ-ये भी सात है (अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्शपौण मास, आग्रायण, चातुर्मास्य, विरूद्ध पशुबन्ध और साश्रामणि) 34—40—सोमयज्ञ-ये भी सात है-अग्निष्टोम, अत्याग्निष्टोम, उवन्हय, षोड़सी, वाजपेय, अतिरात्र, अत्तोर्याम। उपर्युक्त संस्कार ऐसे थे. जो कुछ रोज करने होते थे. कुछ निश्चित समय पर किये बाते थे. कुछ ऐसे थे जिन्हें जीवन में एक बार करना था. जैसे-पंचमहायज्ञ प्रतिदिन किये जाते थे. दर्शपौर्णमास और स्थालीपाक, पन्द्रह दिन में एक बार होता था. पार्वणी, महीने में एक बार चातुर्मास्य वर्ष में एक बार होता था. गर्भाधन पुंसवन और सीमन्त ये संस्कार माता-पिता द्वारा किया जाता था. जिसका उद्देश्य-गर्भ मे आने वाले जीव के दोषों के दूर कर उसके जीवन को गुणों से युक्त बनाने के लिये किये जाते थे. दूसरे जातकर्म संस्कार में बच्चे के पैदा होने पर किया जाता था जिसमें अच्छी पालन पोषण की व्यवस्था की जाये. तीसरा नामकरण संस्कार राशि और नक्षत्र का देखा जाता था कि बच्चे का जन्म किस राशि और नक्षत्र में हुआ और नदी देवता, ऋषि, मुनि के नामों पर बच्चे में उसके नाम के अनुसार

संस्कार पड़े और उच्चारण में भी अच्छा लगे. यह नामकरण संस्कार जन्म के ग्यारहवें दिन होता था. जब तक बालक दूध पीता और अन्न नहीं खाता था किन्तु जब पहली बार अन्न खाता था तब अन्नप्रासन नामक संस्कार किया जाता था जो मन्त्रोचार के द्वारा ही होता था. बच्चे का सातवां संस्कार चूड़ाकर्म होता था जिसमें मन्त्रपाठ के साथ शिखा (चोटी) धारण की जाती थी और भगवान को साक्षी बनाकर पवित्र कार्यों को करने का संकल्प लिया जाता था. आठवा उपनयन का दूसरा जन्म माना जाता था. इस संस्कार के बाद ही वह वेद पाठ, अध्ययन कर सकता था और इस कर्म का उद्देश्य ही यह था कि माता के गर्भ से आर्य गार्भिक तथा पिता से आये बैजिक दोषों को दूर करना था.

नौ से बारह तक के संस्कार विद्या की समाप्ति पर किया जाता था जब बच्चा युवावस्था में प्रवेश करता था तथा ब्रहमचर्य आश्रम के अनन्तर शिक्षा ग्रहण कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश के योग्य हो जाता था तब यह गुरूकुल में गुरू के द्वारा ही किया जाता था. चौदहवां संस्कार विवाह संस्कार माना गया. सबसे महत्वपूर्ण यह संस्कार माना गया. भारतीय दर्शन के अनुसार यह केवल स्त्री पुरूष के शरीरों का ही नहीं अपितु आत्मा और मन का भी सम्बन्ध स्थापित करने वाला यह संस्कार है अग्नि को साक्षी मानकर सभी भाई-बन्धुओं के समक्ष युवा प्राणी एक दूसरे को आजीवन साथ देने के लिये संकल्प लेते है. पन्द्रह से उन्नीसवां संस्कार महायज्ञ थे जो व्यक्ति गृहस्थाश्रम में रहते हुए दैनिक यज्ञ करता था जिससे वह सभी प्रकार की शान्ति की प्रार्थना करता था. बीस से छब्बीसवां संस्कार पाक यज्ञ था जो महीनों के हिसाब से व्रत यज्ञ करता था. सत्ताइस से तैतीसवां संस्कार भी सात थे तथा चौतीस से चालीसवां संस्कार भी सोमयज्ञ था तथा ये भी सात प्रकार के यज्ञ थे. व्यक्ति का गृहस्थाश्रम में रहते हुये अपना-अपने माता-पिता का वर्तमान भूत, भविष्य के दोषों, पापों को दूर करना तथा अच्छा काम करने के लिये और जीवात्मा का परमात्मा से मिलन के लिये ये यज्ञ किये जाते थे. जिनसे व्यक्तिगत गुण तो आता ही था साथ ही सामाजिक कल्याण भी होता था. इसलिये इन यज्ञों को बड़ी ही पवित्र भावना बड़ी कुशलता से किये जाने की मान्यता प्राचीन काल में थी. और यह भी मान्यता थी कि प्रत्येक संस्कार उचित और सही समय पर हो जाने चाहिये. इस प्रकार संस्कारों का जीवन में अति महत्व था.

1) संस्कारों से व्यक्ति दोषों से रहित हो जाता है।

2) व्यक्ति के जीवन में पवित्रता, शुचिता आती है।

3) संस्कारों से व्यक्ति का चिन्तन शुद्ध होता है।

4) संस्कारों से आचरण और व्यवहार भी शुद्ध, परिष्कृत परिमार्जित होता है।

5) संस्कारों से व्यकित की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, बौद्धिक अध्यात्मिक।

6) एवं नैतिक विकास होता है।

7) संस्कारों से व्यक्ति सच्चरित एवं आदर्श नागरिक बनता है. विभिन्न शास्त्रों की 16 संख्या ही मानी गयी है. जो निम्न है-

1)पुंसवन 2)गर्भाधान 3) सीमंतोन्नयन 4) जातकर्म 5) नामकरण 6) निष्क्रमण 7) अन्नप्राशन 8) चूड़ाकरण 9)कर्णवेध 10) उपनयन 11) वेदारम्भ 12) समावर्तन 13) विवाह 14) वानप्रस्थ 15) सन्यास 16) अन्त्येष्टि संस्कार

भगवान वेद व्यास के अनुसारः-

1)गर्भाधान 2)पुंसवन 3) सीमन्तोनयन 4)जातकर्म 5) नामकरण 6) निष्क्रमण 7) अन्नप्राशन 8) चूड़ाकर्म (मुण्ड़न) 9) नामकरण 10) यज्ञोपवीत 11) वेदारम्भ 12) केशान्त 13) समावर्तन 14) विवाह 15) अश्वसध्यासन 16) श्रोताधान

शास्त्र कहते हैंः-जन्म से सभी शुद्ध है, परन्तु संस्कारों से मनुष्य द्विज, वेद पढ़ने से विप्र तथा ब्रहम का ज्ञान प्राप्त करने पर ब्राहमण बनता है। संस्कारों द्वारा मनुष्य के आत्मिक गुणों का विकास होता है. उसके दोष दूर होते है. संस्कारों का उद्देश्य सन्तान, जीवन सम्पत्ति, समृद्धशाक्ति और बुद्धि को विकसित करना है. अंगिरा ऋषि के मत से संस्कारों के द्वारा चरित्र का निर्माण एवं ब्राहमणत्व की प्राप्ति होती है. गौतम ऋषि के अनुसार संस्कारों से युक्त पुरूष ब्रह्म सायुज्य प्राप्त करता है. इस प्रकार भारतीय संस्कृति अनेक दुर्लभ गुणों से युक्त होकर हमारे मानस की सुसंस्कृत बनने की प्रेरणा प्रदान करती है.

सादर आमंत्रण

१७वॉ साहित्य मेला

रजत जयंती आयोजन

4 सितबर 2021, दिनः शनिवार

कार्यक्रम स्थलः

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, सिविल लाईन्स हनुमान मन्दिर के पास, प्रयाग संगीत समिति के सन्निकट, कैरियर कोचिंग के ठीक सामने, सिविल लाईन्स, इलाहाबाद

राष्ट्रस्तरीय पत्र-पत्रिका एवं पुस्तक प्रदर्शनी, काव्य सम्राट प्रतियोगिता, सम्मान समारोह

कृपया किसी अन्य आमंत्रण/सूचना की प्रतीक्षा न करके साहित्य मेला में उपस्थिति दर्ज कराने का कष्ट करें

आयोजकः विश्व हिन्दी साहित्य सेवाा संस्थान, इलाहाबाद

सहआयोजकः श्री पवहारी शरण द्विवेदी स्मृति न्यास, इलाहाबाद

मीडिया फोरम ऑफ इंडिया न्यास, इलाहाबाद

संपर्क कार्यालयः 65ए/2, रामचन्द्र मिशन रोड, लक्सों कंपनी के सामने, श्याम डीजे, मुडेरा, इलाहाबाद–211011, **email:** sahityaseva@rediffmail.com, hindiseva15@gmail.com

सम्पर्क व्यक्तिः डॉ0 गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदीः 09335155949, 9264964112, ईश्वर शरण शुक्लः 09935174896 , प्रभाषु कुमार–9235795931, निगम प्रकाश कश्यप–9793960652

कार्यक्रम विवरण

शनिवार, 4 सितम्बर 2021

प्रथम सत्र

पंजीकरण : प्रातः 8:00 बजे

साहित्य मेला का उद्घाटनः

प्रातः 10:30 बजे	-राष्ट्र स्तरीय पत्र-पत्रिका एवं पुस्तक प्रर्दशनी का उद्घाटन
	-काव्य सम्राट प्रतियोगिता के कवियों का काव्य पाठ
प्रात : 11:30 बजे	-परिचर्चा विषय **'भारतीय त्योहार एवं उनकी उपयोगिता'** चयनित पांच वक्ताओं द्वारा

द्वितीय सत्र

अपरान्ह 1:30 बजे	-मंचासीन अतिथियों का स्वागत,
	-प्रस्तावना सचिव द्वारा
	-स्मारिका व संस्थान द्वारा प्रकाशित अन्य पुस्तकों का लोकार्पण
	-कुलगीत का लोकार्पण एवं पर्दे पर पुस्तुतिकरण
	-संस्थान की वेबसाईट का लोकार्पण
	-सांस्कृतिक कार्यक्रम
	-संस्थान द्वारा रजत पदक
	-विद्वजनों का राष्ट्र स्तरीय सम्मान, अलंकरण
	-मीडिया फोरम ऑफ इंडिया न्यास द्वारा पत्रकारों को उपाधि एवं सम्मान
	-श्री पवहारी शरण द्विवेदी न्यास द्वारा सम्मान
अपरान्ह 5:00 बजे	-सामूहिक राष्ट्रगान एवं समापन

कृपया ध्यान दें:-

१. आयोजन में सम्मिलित होने के लिए दिनांक २० अगस्त २०२१ के पूर्व सूचन देना आवश्यक होगा।

२. विश्व स्नेह समाज मासिक के वे सदस्य जिन्होंने ३१ दिसंबर २०२० के पूर्व सदस्यता ग्रहण की उन्हें रुपये ५००/ संस्थान के खाते में पंजीकरण शुल्क जमा कर जमा पर्ची की प्रति, पूरा नाम व पता ई-मेल करना होगा।

३. अन्य हिन्दी प्रेमियों को रुपये ११००/ जमा कर पंजीकरण कराना होगा। पंजीकरण शुल्क सीधें संस्थान के खाते में जमा कर जमा पर्ची की प्रति, पूरा नाम व पता ई-मेल करना होगा।

४. आयोजन में पंजीकृत समस्त सहभागियों को सहभागिता प्रमाण-पत्र व उपहार सामग्री प्रदान किया जायेगा।

५. आयोजन में सम्मिलित होने वाले समस्त महानुभावों को आयोजन स्थल पर पहुंच कर पंजीकरण कराना होगा। सम्मानित होने वाले महानुभावों, प्रतिभागियों को केवल अपना चयन प्रमाण पत्र दिखाकर, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान के सदस्यों को अपना परिचय पत्र दिखाकर, विश्व स्नेह समाज के सदस्यों को अपना सदस्यता क्रमांक बताकर तथा अन्य को जारी की गई पंजीकरण संख्या बताकर पंजीकरण कराना होगा।

६. पंजीकृत समस्त हिन्दी प्रेमियों को दिनांक ४ सितबर २०२१ की प्रातः ८ बजे से ५ सितबर की प्रातः ८ बजे तक सामूहिक आवास, सुबह व सायंकाल नाश्ता व भोजन की व्यवस्था रहेगी।

७. संस्थान के सदस्यों के लिए व्यवस्था दिनांक ४ सितम्बर की सुबह ८ बजे से ६ सितम्बर की सुबह ८ बजे तक रहेगी।

९. इसके पूर्व या बाद व्यवस्था करने के लिए आपका केवल सहयोग किया जाएगा।

१०. यह एक सामूहिक आयोजन है, व्यक्तिगत नहीं, यथा संभव अपना सहयोग करें, हम आपका यथा संभव सहयोग करेंगे।

११. कार्यक्रम स्थल, रोडवेज बस अड्डा, सिविल लाईन्स के निकट है. रेलवे स्टेशन पर सीटी साइड उतर कर टेम्पों के द्वारा सिविल लाईन्स हनुमान मंदिर उतर कर वहॉ से पैदल 5 मिनट की दूरी पर.

११. सहभागीगण सीधे कार्यक्रम स्थल पर ही पहुंचे.

१२. समस्त नवीन पंजीकृत प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की वार्षिक सदस्यता निशुल्क प्रदान की जाएगी।

पंजीकरण शुल्क जमा करने के लिए खाता विवरण :

खाता धारक का नाम : विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान

बैंक का नाम : ***यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, प्रीतमनगर, प्रयागराज***

खाता सं०ः एस.बी. 538702010009259, आई.एफ.एस. कोडः यूबीआईएन 0553875

अपने आगमन की सूचना प्रत्येक दशा में 20 अगस्त 2021 के पूर्व प्रेषित कर देंवे ताकि कोई आपको असुविधा न हो। कार्यक्रम स्थल पर पंजीकरण संख्या बताकर पंजीकरण अवश्य करावें। अन्यथा किसी भी प्रकार की असुविधा के लिए संस्थान जिम्मेवार नहीं होगा

सम्मानार्थ प्रस्ताव आमंत्रित हैं

साहित्य जगत् में लोकप्रिय, विष्वसनीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित **विश्व हिंदी साहित्य सेवा संस्थान,** 2003 से लगातार साहित्यिकारों/पत्रकारों/समाजसेवियों/कलाकारों को सम्मानित करता आ रहा है. इस वर्ष निम्नांकित सम्मान प्रस्तावित है-

1–20 वर्ष से कम उम्र वालों के लिएः पं. नेहरु सम्मान, श्रीमती चन्द्रावती देवी स्मषति सम्मान, श्री गोरखनाथ दुबे स्मषति सम्मान, बचपना सम्मान **2–20 से 40 वर्ष के लिएः** काका कलाम सम्मान, कल्पना चावला सम्मान, निर्भया सम्मान, पत्रकारश्री **3–40 वर्ष से ऊपर के लिएः** डॉ. होमी जहांगीर भाभा सम्मान, पत्रकार रत्न, समाज शिरोमणि, काव्य शिरोमणि, साहित्य शिरोमणि, **4-सभी आयु वर्ग के लिएः** विशिष्ट हिन्दी सेवी/हिंदी सेवी सम्मान, **राष्ट्रभाषा सम्मान, राजभाषा सम्मान, शिक्षकश्री, विधिश्री,** 5-समग्र साहित्य के लिए संस्थान की सबसे बड़ी उपाधियां क्रमश : साहित्य रत्न(डी.लिट), साहित्य गौरव(डाक्टरेट/पीएचडी), साहित्यश्री हैं.

अन्य किसी भी प्रकार की जानकारी के लिए ईमेल करे, या व्हाट्सएप करेंः

अंतिम तिथिः 15 दिसम्बर 2021

चतुर्थ लघु कथा प्रतियोगिता

पुरस्कार राशि 5000/रुपये मात्र

देश-विदेश का कोई भी लेखक इसमें प्रतिभाग कर सकता है. इस प्रतियोगिता में उम्र का कोई बंधन नहीं है. आपको अपनी एक लघु कथा पठनीय हस्तलिपि अथवा टंकित कराकर भेजनी होगी। रचना के साथ अपना पूरा नाम, पता, एक फोटो, ह्वाट्सएप नंबर अगर ई-मेल हो ईमेल आईडी भेजना होगा। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि लघु कथा 300 (तीन सौं) शब्दों से अधिक की न हो.

नियम एवं शर्तेः

1. रचना मौलिक होनी चाहिए. इसके लिए मौलिकता का प्रमाण देना आवश्यक होगा। किसी भी स्तर पर मौलिकता में कमी सिद्ध होने पर प्रतिभागिता रद्द कर दी जाएगी। 2. प्रतियोगिता तीन चरणों में होगी. प्रत्येक चरण के विजयी प्रतिभागियों को ह्वाट्स समूह, ई-मेल के माध्यम से जानकारी दी जाएगी. 3. प्रथम चरण के प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका एक वर्ष की सदस्यता निःशुल्क दी जाएगी। 4. द्वितीय चरण के लिए चयनित प्रतिभागियों को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका दो वर्ष की सदस्यता निःशुल्क दी जाएगी। 5. तृतीय एवं अंतिम चरण के लिए एक रचनाकार का चयन किया जाएगा. जिसे इलाहाबाद में आयोजित होने वाले साहित्य मेला में पुरस्कार राशि और प्रमाण पत्र स्वयं उपस्थित होकर ग्रहण करना होगा। विजेता को विश्व स्नेह समाज की मासिक पत्रिका पंचवर्षीय सदस्यता निःशुल्क दी जाएगी। 6. प्रतिभागियों को मांगे गये विवरण के साथ रुपये दो सौ पचास का चेक/डीडी/आरटीजीएस/नेफ्ट/आन लाईन अथवा`सीधे संस्थान के खाते में जमा कर जमा रसीद की प्रति भेजना अनिवार्य होगा। खाता धारक का नामः **'सचिव विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान, इलाहाबाद'**

बैंक का नाम : **युनियन बैंक ऑफ इंडिया** शाखा : **प्रीतम नगर, इलाहाबाद,** खाता संख्याः **538702010009259**

आई.एफ.एस. कोडः यूबीआईएन 0553875

रजत जयंति आयोजन

संस्थान जून 2021 में अपना 25 वर्ष पूर्ण कर चुका है। इस अवसर पर दो दिवसीय वृहद आयोजन किया जाएगा. आयोजन संभावित तिथियां

प्रथम दिन, दिन शनिवार, 04.09.2021

प्रथम सत्र

-काव्य सम्राट प्रतियोगिता-2020—21

-परिचर्चा

द्वितीय सत्र

-संस्थान के कुलगीत का लोकार्पण

-संस्थान की वेबसाईट का लोकार्पण

-संस्थान की रजत जयंति स्मारिका का विमोचन

-सारस्वत सम्मान 2019—20

-श्री पवहारी शरण द्विवेदी स्मृति न्यास द्वारा सारस्वत सम्मान

-मीडिया फोरम ऑफ इंडिया न्यास द्वारा सारस्वत सम्मान

दूसरे दिन रविवार, 05.09.2021

-संस्थान नवनिर्मित निज पुस्तकालय एवं वाचनालय का उदघाटन

-संस्थान के पदाधिकारियों/हिन्दी सांसदो एवं सदस्यों परिचय सत्र

-संस्थान के पदाधिकारियों/हिन्दी सांसदो एवं सदस्यों की काव्य, चित्रकला, काव्य अतांकक्षरी प्रतियोगिता, नृत्य एवं गायन प्रतियोगिता

-पदाधिकारियों एवं सदस्यों का सम्मान

इस आयोजन में 25 प्रतिभाओं (साहित्य/समाज सेवा/कला/संस्कृति) को संस्थान की उपाधियों / सारस्वत सम्मानों से सम्मानित किया जाएगा। आप सभी स्मारिका के लिए सशुल्क शुभकामनाएं, अपने प्रकाशनों का प्रचार-प्रसार, विज्ञापन, चंदा के माध्यम से यथा सम्भव सहयोग प्रदान करें। सभी सम्मानित होने वाले गणमान्यों तथा संस्थान के पदाधिकारियों/सदस्यों के लिए सामूहिक आवास एवं भोजन की व्यवस्था संस्थान करेगी। अगर आप इस समारोह में प्रतिभाग करना चाहते हैं तो अपना पंजीकरण ई-मेल के माध्यम से पंजीकरण प्रपत्र प्राप्त कर १५ अगस्त २०२१ तक करा सकते है। सभी पंजीकृत प्रतिभागियों को सहभागिता प्रमाण पत्र व उपहार सामग्री प्रदान की जाएगी.

सचिव, विश्व हिन्दी साहित्य सेवा संस्थान,

एल.आई.जी—93, नीम सराय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद-211011, ह्वाटसएप नं०: 9335155949, sahityaseva@rediffmail.com, hindiseva15@gmail.com

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक गोकुलेश्वर कुमार द्विवेदी द्वारा एकेडेमी प्रेस, से मुद्रित तथा एल. आई.जी. 93, नीम सराय कॉलोनी, मुण्डेरा, इलाहाबाद से प्रकाशित।